# संसार का नारी इतिहास

दूसरा भाग

## भारत का—

# नारी इतिहास

भारत वर्षकी ५०० पांच सौ पतिव्रता, सुशीला, वीर, विदुषी, उदार हृदया, धार्मिका, बुद्धिमती, सच्चरित्रा, गृहलक्ष्मी, और सती प्राचीन स्त्रियों के—

## जीवन चरित्र

# सतीत्व की झांकी

जिसको

## श्रीमती यशोदादेवी

सम्पादिका स्त्रीधर्म-शिक्षक

कर्नलगञ्ज-प्रयाग ने

स्त्री-जाति के उपकारार्थ संग्रह कर

सरल भाषा में छपाया

प्रथम [illegible] २००० सम्वत् [illegible]७८

[illegible] शिवरतन्दे [illegible]। मूल्य [illegible]

बीकानेर।

बड़ा भारी लाभ पहुँचा है। ऐसे जीवन चरित्रों की इतनी अधिक आवश्यकता है कि जितनी किसी अन्य प्रकारकी पुस्तको की नहीं, क्योंकि जीवन चरित्रों से सभी प्रकार की शिक्षा मिलती है ऐसे जीवन चरित्रों की कमीको पूरा करनेके लिये कई वर्षोंके कठिन परिश्रम से ५०० पांच सौ स्त्रियों के जीवन चरित्रों को बड़ी खोज और खर्च कर इकट्ठा किया है यह एक अपूर्व संग्रह है इस सम्पूर्ण पुस्तक के प्रकाशित हो जाने पर एक बड़ी भारी कमी पूरी होगी पुस्तक कैसी उपयोगी होगी और इससे स्त्री जातिका कितना अधिक उपकार होगा सो पुस्तक को पढ सुनकर ही पता लगेगा।

जिनके पढने और सुनने से स्त्रियों और कन्याओं के चित्तपर जादू कैसा असर होगा, इस पुस्तक की भाषा ऐसी सरल और मनोहर है जिसको पढना आरम्भ करके छोडने की इच्छा न होगी। हर एक स्त्री के पास एक एक प्रति अवश्य रहना चाहिये इस पुस्तक के पढने और सुनने से जिन उपयोगी शिक्षाओं का मूखसे मूख स्त्रियों और कन्याओंके हृदयपर उत्तम प्रभाव पड़ैगा वह अन्य प्रकारकी सैकडो पुस्तकें पढने और सुननेसे भी न पड़ैगा इसलिये बहुत सी पुस्तको को न पढाकर एक यही पुस्तक पढ़ाइये इसमें सभी प्रकार की गुणवती प्राचीन स्त्रियों के अपूर्व चरित्रों का वर्णन है जिसे पढ सुनकर स्त्रियां ही क्या पुरुष भी प्रसन्न होंगे।

इस दुर्लभ ग्रन्थके संग्रह करने में जितना अधिक समय व्यतीत हुआ तथा जिन बड़े बड़े बहुमूल्य प्राचीन ग्रन्थों का मथन कर यह लिखा गया है उसका हिसाब लगाकर यदि इसका मूल्य २५) रुपया रक्खा जावै तो भी अधिक न होगा परन्तु इस परिश्रम और खर्च का विचार न कर मूल्य पूरे ग्रन्थ का भी लागत मात्र ही कम रक्खा जावैगा जिससे सब साधारण स्त्रियां भी मगाकर लाभ उठासकें।

कई भागों में ५०० सौ जीवन चरित्र पूरे होंगे शीघ्रही पत्र भेज कर सम्पूर्ण पुस्तक के ग्राहक बन जाइये जिस प्रकार जो भाग प्रकाशित होगा वी० पी० द्वारा उपहारी मूल्य में भेजा जावेगा।

**पता:—श्रीमती यशोदादेवी**

पोस्ट बक्स न० ४ कर्नलगञ्ज इलाहाबाद

# श्रीमती यशोदादेवी
## सम्पादिका स्त्रीधर्म-शिक्षक
## कर्नलगञ्ज प्रयाग का

# स्त्री-शिक्षा पुस्तकालय

श्रीमती यशोदादेवी कृत स्त्रीशिक्षा का १०८ पुस्तकें छपकर तैय्यार हो पचासों हजार प्रतियां हाथोहाथ बिक गईं और बिक रही हैं।

यदि आप अपने घरकी स्त्रियों पुत्रियों और पुत्र वधुओं को आदर्श गृहिणी, सच्ची माता, सुशीला बहू चतुर कन्या बनाना चाहते हैं उन्हे सर्वगुण सम्पन्ना बनाने की इच्छा है और आप उनके सच्चे हितैषी हैं तो श्रीमती यशोदादेवी कृत स्त्री शिक्षा की कुल पुस्तकें या जितनी सामर्थ हो उतनी पुस्तकें मगाकर पढ़ाइये और सुनाइये । स्त्री उपयोगी

कोई विषय ऐसा नहीं जिस विषय की पुस्तकें इन पुस्तकों में मौजूद न हों। पुस्तकों की भाषा सरल और मनोहारिणी अक्षर बड़े और साफ है गूढसे गूढ विषय भी ऐसी सरल भाषा मे समझाया गया है कि मूर्ख से मूर्ख स्त्रियां भी सरलता से ही समझ लेती है और पुस्तकों से अनेक प्रकार के गुण सीखजाती हैं थोड़े ही परिश्रम और कुछ थोड़ेही खर्च से हजारों रुपये का फायदा उठाती हैं।

## इधर देखिये-

स्त्रियो और बालिकाओं के सुधार के लिये जिन अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की आवश्यकता थी वे ही पुस्तकें छपकर तैयार है।

## पुस्तके कैसी हैं-

इसके लिये बड़े बड़े विद्वान पंडित, स्कूल्स इन्स्पेक्टर, विदुषी रानी महारानी और सर्व साधारण स्त्री पुरुष, सभा सुसाइटी सभी ने प्रशंसा की है। हम इन उपयोगी

पुस्तकों की प्रशंसा न कर केवल पुस्तकों के नाम और दाम इस सूची मे प्रकाशित करती है आशा है पाठक पाठिका गण पुस्तकों के नामसे ही उनके गुणो का पता लगालेंगी।

# पुस्तकें यह हैं।

| | | | |
|---|---|---|---|
| १-गर्भरक्षा विधान | ॥।) | २४-३६ आदर्श कुमारिया | ।) |
| २-पाकशास्त्र दोनो भाग | २॥) | २५-सतीत्वकी झाकी | १।) |
| ३-नारी नीत शिक्षा | ।) | २६-स्त्री संगीत सागर | ॥) |
| ४-बालापत्र व्यवहार | ।) | २७-बाला स्मृति शास्त्र | ।) |
| ५-घर का वैद्य | ।) | २८ घर की दुलिन | ।) |
| ६-पातिव्रत धममाला | ।) | २९-बाला मनरञ्जन | ।) |
| ७-धात्री विद्या | ।≈) | ३०-सच्चा पतिप्रेम | ।) |
| ८-भजन वाटिका | ≡) | ३१ पत्नीकी मनोहर चिट्ठिया | ।) |
| ९-जीवन रक्षा | ॥।) | ३२-आदर्श हिन्दू विधवा | ।) |
| १०-सन्तान पालन | ≈) | ३३ पतीपत्र दर्पण | ।) |
| ११-रत्नसंग्रह प्रथम भाग | ॥) | ३४-शिशु रक्षा विधान | ।) |
| १२-रत्नसग्रह दूसरा भाग | ॥) | ३५ सुखी कुटुम्ब | ॥।) |
| १३ रत्नसग्रह ती० भा० | ॥) | ३६-पाठशाला की कन्याए | ।) |
| १४-रत्नसंग्रह चौथा भाग | ॥) | ३७ अन्धार की कोठरी | ॥।) |
| १५ रत्नसग्रह पाचवा भाग | ॥) | ३८-शिक्षा कुसुम | ।) |
| १६-रत्नसग्रह छठवा भाग | ॥) | ३९ पत्नी पत्रादर्श | ।) |
| १७ रत्नसग्रह सातवाभाग | ॥) | ४०-अमृत का बूद | ।) |
| १८ रत्नसग्रह आठवा भाग | ॥) | ४१-नई बहू | ।) |
| १९-रत्नसग्रह नवा भाग | ॥) | ४२-सुचरित्र सगठन | ।) |
| २० रत्नसग्रह दसवा भाग | ॥) | ४३ नारीसगीत शिक्षा | ।) |
| २१-रत्नसग्रहग्यारहवा भाग | ॥) | ४४-गुणों की पिटारी | ।) |
| २२-रत्नसंग्रह बारहवा भाग | ॥) | ४५ आदर्श-रसोईया | ।) |
| २३ रत्नसग्रह तेरहवां भाग | ॥) | ४६-सती भूषण | ।) |

## स्त्री-शिक्षा की पुस्तकों की संक्षिप्त सूची।

४७-आदर्श गृहणी १)
४८-घर की बातें ।)
४९-लड़कियों के खेल ।)
५०-वनिता पत्र दर्पण ।)
५१-शृङ्गार दान ।)
५२-पतिकोमनोहारणीचिट्ठियां ।)
५३-महिला हस्तभूषण ।)
५४-सच्ची सहेली ।)
५५-वीर पत्नी ।)
५६-सन्तति सुधार ॥)
५७-कन्याभजन भण्डार ।)
५८ लीलावती जबानीहिसाब ।)
५९ सुघड़ रंगरेज ।)
६०-नारी नीति कुंडल ।=)
६१-गृहिणी गृह चर्या ।=)
६२-शास्त्र शिक्षा ।=)
६३-नारी ज्ञान मुद्रिका ।=)
६४-पतिव्रत धर्ममाला ।)
६५-आदर्श सखियां ॥)
६६-नव वधू रहस्य ॥)
६७-पातिव्रत धर्म रहस्य ।)
६८-सती सावित्री ॥)
६९-सती सीता ॥)
७०-दमयंती कथा ॥)
७१-भारत की वीर स्त्रियां ॥)
७२-आदर्श जननी ।)
७३-धार्मिक कथाएं ॥)
७४-विधवा धर्म दर्पण ।)
७५-विधवा ज्ञान माला ।)
७६-विधवा कर्त्तव्यशास्त्र ।)
७७-वैधव्य धर्म भूषण ।)
७८-स्त्रीचिकित्सा शास्त्र ॥)
७९-कथा कहानी ।)
८०-सुशीला कन्या ।)
८१-लक्ष्मी कन्या ।)
८२ तिथि पर्व व्रत कथाएं ।)
८३-पति की मर्यादा ।)
८४-गृहस्थ जीवन ।)
८५-पतिव्रता ।=)
८६-नव कुसुम हार ।=)
८७ सदाचारणी ॥)
८८-सुशीला कमला ।=)
८९-देवरानी जेठानी ।=)
९०-सती सर्वस्व ।=)
९१-सती विधवा ।)
९२-सुशीला विधवा ।)
९३-भारतकीआदर्श विधवाएं ॥)
९४-वैराग्य व्रत कथाएं ।)
९५-पत्नी व्रत ॥)
९६-स्त्री चिकित्सा रत्न ।)
९७ हरिश्चन्द्र तारामती ।)
९८-सच्ची माता १)
९९-बाल स्मृति ।)
१००-शिल्प शिक्षा ॥)
१०१-पत प्रेम की झांकी ≠)
१०२-सती सुकुमारियां ।=)
१०३-कन्या शिक्षावली ।)
१०४ सुघड़ कन्या ।)
१०५-धर्म की पूंजी ।)
१०६-शिल्प ज्ञान ।)
१०७-स्त्री वैद्यविद्या २॥)
१०८-भारतका नारीइतिहास १=)

पताः-यशोदादेवी पो० बक्स नं० ४ कर्नलगंज प्रयाग

# संसार का नारी इतिहास।

दूसरा भाग—

# भारत का नारी इतिहास

## हरिश्चन्द्र तारामती।

त्रेतायुगमें राजर्षि राजा हरिश्चन्द्र हुये थे। वह बड़े धर्मात्मा पृथ्वी के पालने वाले राजाओं में प्रधान थे। उनके राज्य में अन्नका अकाल नहीं पड़ता था। किसी को रोग न होता था। प्रजा मे अकाल मृत्यु नहीं होती थी न कोई पाप करता था कोई धन बल व तप का अभिमान नहीं करता था। स्त्रियां सदा युवती ही रहती थी उस राजा ने किसी समय हरिण के शिकार के लिये दौड़ते हुये "रक्षा करो बचाओ" आदि स्त्रियों के मुंह से निकले हुये शब्द सुने। वह धार्मिक राजा उस हरिण को छोड़कर "मत डरो मत डरो" कहता हुआ लौट पड़ा और बोला कि कौन ऐसा दुष्ट है जो मेरे रहते

ऐसी अनीति कररहा है यह चिल्लाहट मिटाने के लिये राजा उसी ओर दौड़े जिधर से वह रोने की आवाज आरही थी। इसी बीच में शिव के प्रिय पुत्र गणेश सोचने लगे कि वीर्य्यवान और ऋषी विश्वामित्र बड़े भारी तप करते हुये उन विद्याओं का साधन करते हैं। जिन्हे शिव आदि योगी न साध सकें क्षमा मौन चित्त आदि को अपने वशमें रख कर यह उन्हें साधन करते हैं और यह चिल्लाकर रोरही है तो मैं इस समय कौन उपाय करूं। जिस से यह सिद्ध न हों यह महातपेश्वरी विश्वामित्र बड़े तेजस्वी हैं हम निर्बल हैं और यह डर से चिल्ला रहीं हैं। इस का उपाय कठिन जान पड़ता है। अथवा मत डरो कहता हुवा यह राजा आता है तो इसके शरीर में घुस कर तुरन्त अपना कार्य साधन कर लूं गा ऐसा सोचकर विघ्नराज गणेश राजाके शरीर में घुस गये उन के प्रभाव से राजा हरिश्चन्द्र क्रोधकर बोले बल और प्रताप से तपते हुये मेरे ऐसे

राजा के रहते कौन ऐसा पापी है जो धधकती हुई आग कपड़े में बांध रहा है। कौन ऐसा है जो मेरे धनुष से निकलकर चारो दिशाओं को प्रकाशित करने वाले वाणों से अंग अंग छिदकर महानिद्रा में सोना चाहता है। राजा की यह बात सुन कर विश्वामित्र ने क्रोध किया। उन के क्रोध करते ही सब विद्याये एक पलमें नष्ट हो गई राजा तपोनिधि विश्वामित्र को देखकर डर से पीपल के पत्ते की तरह कांपने लगे तब मुनि ने पुकारा रे दुष्ट खड़ा रह! तब राजा हाथ जोड़ कर उन के पावों पर गिरकर बड़ी नम्रतासे बोले हे भगवन्! यह मेरा धर्म है मैंने कुछ अपराध नहीं किया। मैं अपने धर्म पर हूं। इस कारण मुझ पर क्रोध करना उचित नहीं है। न्यायकारी धार्मिक राजाओं को उचित है कि धर्मशास्त्रके अनुसार दान दें रक्षा करें और धनुष उठाकर युद्ध करें विश्वामित्र ने कहा, हे राजन्! यदि तुम्हें पाप का भय है तो तुम्हो बताओ दान किसे देना

चाहिये, किस की रक्षा करनी चाहिये और किस के संग लड़ना चाहिये। हरिश्चन्द्र ने उत्तर दिया अच्छे ब्राह्मणों को दान देना चाहिये डरे हुये की रक्षा करनी चाहिये और शत्रुओं से लड़ना चाहिये विश्वामित्र ने कहा हे राजन् यदि आप राज धर्म अच्छी तरह जानते हैं तो मैं यज्ञ करना चाहता हूं आप मुझे ब्राह्मण समझकर मनमानी दक्षिणा दीजिये। राजा यह सुनकर मन में बहुत प्रसन्न हुये और ऐसा समझने लगे मानो उन का फिर से जन्म हुआ है वह विश्वामित्र से बोले। हे भगवान्! आप क्या चाहते हैं सो भय छोड़कर मांगिये। यदि दुर्लभ वस्तु भी आप मांगेंगे तो वह दी हुई समझिये। सोना चांदी पुत्र स्त्री शरीर प्राण राज्य पुर अथवा लक्ष्मी जो इच्छा हो मांगिये। विश्वामित्र ने कहा हे राजन्! यदि आप देने की प्रतिज्ञा करते हैं तो मैं मांगता हूं।

आप मुझे पहिले जो राजसूययज्ञ की दक्षिणा ( सर्वस्व ) है वह दीजिये। राजा ने

कहा हे भगवन्। मैं राजसूय यज्ञ की दक्षिणा आपको दूंगा कितनी और क्या दक्षिणा आप चाहते है। विश्वामित्र ने जवाब दिया-हे सब धर्मोंके जानने वाले राजन्। सागर, पर्वत, गांव नगर से परिपूर्ण समूची पृथ्वी रथ घोड़े और हाथियों से भरा हुआ समस्त राज्य अन्नसे भरे हुये कोठे और खजाने अथवा जो कुछ तुम्हारा है सब मुझे दे दीजिये और अपना धर्म भी दे दीजिये जो मरने के पीछे भी संग हो रहता है। अधिक कहां तक कहें स्त्री पुत्र और शरीर को छोड़कर अपनी सब वस्तुएं दे दीजिये। राजा मुनिका वचन सुन कर कुछ भी उदास न हुए। प्रसन्न चित्तहो हृदय से हाथ जोड़ कर बोले "अच्छा।" विश्वामित्र ने कहा यदि आपने अपना राज्य पृथ्वी सेना और धन आदि सब पदार्थ देदिये और मैं तपस्वी इस राज्य का मालिक बन गया तो अब आज्ञा किस की चलेगी। हरिश्चन्द्र ने कहा भगवन् जिस समय मैंने संपूर्ण सम्पत्ति से भरी हुई पृथ्वी

आप को नहीं दी थी, उस समय भी आप ही स्वामी थे। अब तो आपही राजा हुये अब पूछना ही क्या है। विश्वामित्र ने कहा राजन्! यदि तुमने मुझे समूची पृथ्वी देदी तो अब करधनी कुण्डल आदि गहने उतार कर पेड़ की छाल पहनो और स्त्री पुत्र लेकर जहा तक मेरा राज्य है उस के बाहर निकल जाओ। राजा अच्छा कहकर अपनी रानी तारामती और छोटे बालक पुत्र को लेकर चलने लगे। तब विश्वामित्रने उनको राह रोककर कहा कि इस महायज्ञ की दक्षिणा दिये बिना कहां चले जाते हो। हरिश्चन्द्र ने कहा भगवन्। मैने निष्कण्टक समस्त राज्य आप को दे दिया अब यह तीन शरीर बच गये है। विश्वामित्र ने कहा कुछ हो मेरी यज्ञकी दक्षिणा अवश्य देनी पड़ेगी। जो कही हुई दक्षिणा ब्राह्मण को नहीं देता उस का नाश होजाता है। राजसूययज्ञ में उचित है कि जब तक ब्राह्मण दक्षिणा से तृप्त न हो जाय तब तक उसे देता ही जाय

देने की प्रतिज्ञा करके देनाही उचित है जो अपने को मारने के लिये आवे उससे युद्ध करना चाहिये और भयभीत की रक्षा करना चाहिये यह बातें तुम्हीने तो कही हैं। राजाने कहा भगवन्। इस समय मेरे पास कुछ नहीं है। मै समय पाकर आपको देदूंगा। आप दयाकर इस समय प्रसन्न होकर क्षमा कीजिये मुनि ने कहा हे राजन्! तुम बतादो कितने दिनों में दोगे? मैं उतने दिनों तक तुम्हारी बाट देखूंगा यदि उस समय तुम न दोगे तो शाप की आग से तुम्हे जलाकर भस्म कर दूंगा। राजाने कहा हे विप्र! मैं एक महीने के भीतर आपको दक्षिणा देंदूगा। आप इस समय मुझे उस का उपाय करने के लिये जाने की आज्ञा दीजिये। मुनि ने कहा हे राजन्! तुम जाओ और अपने धर्म्म का पालन करो। मार्ग मे तुम्हारा कल्याण हो किसी प्रकार का विघ्न न हो।

विश्वामित्र के मुंह से "जाओ" सुनकर राजा अचम्भे मे डूबे हुये तुरन्तही वहांसे चल

दिये उनको प्यारी रानी जो कभी पैदल नहीं चली उन के पीछे चली राजा को पुत्र और स्त्री के साथ इस प्रकार जाते हुए देखकर नगर के लोग रोने लगे। हा नाथ ! दुःख से निकलते देख कर उस के दास दासी तथा नगर के लोग रोने लगे। दुःख से पीड़ित हम लोगों को छोड़ कर कहां चले जाते हो। तुम बड़े धर्मात्मा राजा हो अपनी प्रजा पर बड़ी कृपा रखते हो। हे राजन् यदि धर्म्म की ओर तुम्हारा ध्यान है तो हम लोगों को अपने साथ लेते चलो हे राजेन्द्र ! थोड़ी देर ठहरो हम अपने नेत्र रूपी भौरों से तुम्हारे मुख कमल का मधुपान करें न जाने फिर कब तुम्हारा मुख देखने को मिलेगा जिस की सवारी के साथ बड़े २ राजा चलते थे वह अब केवल स्त्री पुत्र को लेकर चला जाता है। जिस की यात्रा के समय दासलोग हाथियों पर चढ़कर आगे चलते थे वह महाराज हरिश्चन्द्र आज पैदल चले जाते हैं हा राजा ! यह तुम्हारा सुकुवार

कोमल शरीर बालक जिसकी भौंहें टेढी और काली है। और शरीर बहुत कोमल है। मार्ग को धूल मे लिपट कर कैसा हो जायगा।

हे नृपवर ठहरो ठहरो! अपने धर्म्म का पालन करो मनुष्य का प्रधान धर्म्म ही है। कि सब पर दया करे। स्त्री पुत्र धन तथा अन्न से क्या यह सब छोड़कर हम लोग तुम्हारे पीछे छाया की तरह चलेंगे। हे नाथ! हा महाराज! हे स्वामिन्! क्यों हम लोगों को छोड़कर चले जाते हो। जहां तुम रहोगे वहीं हम लोगोंको सुख मिलैगा वही स्वर्ग है। जहां तुम रहो-वही नगर है। जहां तुम रहो वही हमारा स्वर्ग है। नगर निवासियोंकी ऐसी शोक भरी वाणी सुनकर राजा शोकाकुल हो कर प्रजापर दया करके मार्ग में कुछ काल तक ठहरे। विश्वामित्र भी नगर निवासियों की बातोंसे राजा को घबराया देखकर क्रोध कर और भय दिलाकर आंखे लाल करके राजासे बोले। रे नीच-चरित्रवाले! टेढी बातें बोलने वाले! झूठे! तुझे धिक्कार मुझे राज्य देकर

तू फिर लौटा लेना चाहता है। विश्वामित्र की यह कठोर बात सुनकर राजा कांपउठे। और मैं जाता हूं यह कहकर अपनी रानी का हाथ पकड़ कर खींचते हुये चले गये। परिश्रम से थकी हुई सुकुमारी प्यारी रानी को राजा खींच हो रहे थे कि विश्वामित्र ने झट लाठी उठाकर रानी को मारा। यह देखकर राजा बहुत दुःखी हुये पर शान्त रहे। केवल यह कहा मैं तो जाही रहा हूं। राजा हरिश्चन्द्रकी यह दुर्दशा देखकर परम दयालु विश्वदेवा बोलउठे यह पापी विश्वामित्र न जाने किस लोक मे जायगा। इसने यज्ञ करनेवाले राजाओं में प्रधान राजा हरिश्चन्द्र को इस प्रकार राज्य से उतारा अब हमलोग किस के महायज्ञ में श्रद्धा के पवित्र मन्त्र से दिया हुआ और विधि से बना हुआ सोम पीकर तृप्त होंगे। उन की यह बात सुनकर विश्वामित्र ने बड़े क्रोध से शाप दिया कि तुम सब मनुष्य हो जाओ। जब उन्हो ने बहुत बिनती कि तब विश्वा-

मित्र ने प्रसन्न होकर कहा कि मनुष्य होने पर भी तुम्हारे लड़के लड़कियां न होंगी। बिवाह न होंगे, अभिमान न होगा, कामक्रोध न होगा और फिर तुम देवता हो जाओगे। विश्वामित्र के शाप से वही देवता अपने अपने अंशों के कुरु के घर में पाण्डवों की स्त्री द्रौपदी के गर्भ से पांच पुत्र हुए यही कारण है पांचो महारथी पाण्डव पुत्रों का उस शाप के बश बिवाह न हुवा। राजा विश्वामित्र की बात सुनकर बहुत दुःखी हुये और अपनी रानी तथा छोटे बालक को लेकर धीरे २ चले। काशीशिव-पुरी है इस पर मनुष्यका कुछ भी अधि-कार नहीं है। ऐसा जानकर परम पवित्र काशीपुरी मे पहुचे। अपनी स्त्री तथा पुत्र को लिये काशी में घुसते ही राजा ने विश्वा-मित्र को आगे खड़ा देखा राजा। विश्वा-मित्र को देखते की प्रणाम कर हाथ जोड़ कर बोले हे मुने! यह मेरे प्राण यह मेरी स्त्री और यह मेरा लड़का तैय्यार है इन मे

जिससे आपका कुछ भला हो उसे ले लीजिये। अथवा और कोई आपके मन के योग्य काम हो वह कहिये। विश्वामित्र ने कहा हे राजर्षि! एक महीना पूरा हो गया यदि तुझे अपनी बात याद हो तो मुझे राजसूय यज्ञ वाली दक्षिणा देदे। हरिश्चन्द्रने कहा हे उग्रतपोधन विप्र! महीना आज पूरा होता है अभी आधा दिन बाकी है। सध्या तक ठहरिये मैं दक्षिणा चुका देता हूं विश्वामित्र ने कहा अच्छा महाराज ऐसा ही सही मैं फिर आता हूं यदि आज दक्षिणा न दोगे तो मैं तुम्हे शाप दूंगा। विश्वामित्र के चले जाने के बाद राजा अपने मन में सोचने लगे कि कैसे कही हुई दक्षिणा इस ब्राह्मण को दूँ। मेरे पाले हुये मित्र कहां गये मेरा धन इस समय कहां चला गया। ऐसा न हो कि इस कठिन दक्षिणा के लिए मुझे नरक में जाना पड़े। मैं इस समय-महा दरिद्र होकर क्या प्राण छोड़ दूं। अथवा कहां जाऊं! यदि मै दक्षिणा ब्राह्मण

को बिना दिये ही मर जाऊंगा तो अधम से भी अधम पापी होकर ब्राह्मण का धन लेने वाले कोड़े बनूंगा। अपनी देह वेचकर दास होना अच्छा है राजा शिर झुकाये कातर होकर यह बात सोच ही रहे थे कि रानी रोती हुई लड़खड़ाती आवाज से बोली हे महाराज! चिन्ता छोड़ कर अपने सत्य का पालन कीजिये। झूठे आदमी को श्मशान के समान छोड़ देना चाहिये। हे पुरुषसिंह! पुरुष के लिये सत्य पालन के समान दूसरा कोई धर्म्म नहीं है। उस का अग्नि होत्र वेदपाठ दान तथा और दूसरी पवित्र क्रियायें व्यर्थ हो जाती हैं। जिस का वचन झूठा हो जाता है धर्म्म शास्त्रों मे पंडितो ने कहा है कि सत्य वाक्य जिस प्रकार तारने के लिये हैं मिथ्या वाक्य उसी प्रकार डबोता है हे महाराज! आपने सात अश्वमेधयज्ञ कर के राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान किया। अब क्या एक छोटे से असत्य वाक्य के लिये स्वर्ग भ्रष्ट होगे। हे राजन्! अब तो मेरे पुत्र हो

गया है। यह कहकर रानी रोने लगी राजा हरिश्चन्द्र ने डबडबाई आंखों से रानीसे कहा हे सौभाग्यवती ! गज गामिनी देखो यह लड़का तुम्हारी ओर देख रहा है। जो तुम्हे कहने की इच्छा हो कहो। रानी ने कहा नाथ ! मेरे पुत्र हो ही गया है अच्छे लोगों का मत है कि स्त्री पुत्र पैदा करने के लिये है इससे आप मुझे वेचकर ब्राह्मणको दक्षिणा दे सकते है। यह बात सुनतेही राजा मूर्छित होगए फिर होश में आकर बहुत दुःखी हो कर विलाप करने लगे। प्यारी। यह बड़े दु.ख की बात है कि तुम्ही ऐसी बातें मुझ से कहती हो क्या तुम्हारी मुसकान भरी प्यारी बातें मुझ पापीको भूल गई है हे मन्द मुसकान करने वाली प्यारी, हा ! क्या तुम्हें यह बात कहनी उचित [illegible] ऐसी [illegible] मुंह से कभी न निकालो [illegible]

नहीं कर [illegible]

धिक्कार [illegible]

कर पृथ्वी [illegible]

पृथ्वी में मूर्छित पड़ा देखकर विलाप करती हुई रानी बोली। हाय ! महाराज ! यह मूर्छा तुम्हे क्यों आई। तुम रेशमी बिछौने पर सोने वाले हो। इस समय पृथ्वी मे क्यों गिर गये ! जिसने करोड़ों गाये और करोड़ों रुपये ब्राह्मणों को दान दिये वही मेरे पति पृथ्वीनाथ आज भूमिपर सो रहे है। हा भाग्य ! इसने क्या तुम्हारा अपराध किया था कि तुमने इस विष्णु तथा इन्द्रके समान राजा को इस दशा मे पहुंचा दिया। ऐसा कहकर वह सुन्दर नितम्बों से शोभा पाने वाली महारानी भी पति के असह्य महा दुःख के बोझ से दबकर मूर्छित होगई। पिता माता दोनों को अनाथ की तरह जमीन पर पड़े हुये देखकर वह बालक भूख से घबराकर बोला। हे पिता ! हे तात ! अन्न दो अरी माता अम्मा मुझे भोजन दे। मुझे बड़ी जोर से भूख लग रही है। इसी बीच में महातपस्वी विश्वामित्र आ पहुंचे राजा हरिश्चन्द्र को मूर्छित होकर

गया है। यह कहकर रानी रोने लगी राजा हरिश्चन्द्र ने डबडबाई आंखों से रानीसे कहा हे सौभाग्यवती! गज गामिनी देखो यह लड़का तुम्हारी ओर देख रहा है। जो तुम्हे कहने की इच्छा हो कहो। रानी ने कहा नाथ! मेरे पुत्र हो ही गया है अच्छे लोगों का मत है कि स्त्री पुत्र पैदा करने के लिये है इससे आप मुझे बेचकर ब्राह्मणको दक्षिणा दे सकते है। यह बात सुनतेही राजा मूर्छित होगए फिर होश में आकर बहुत दुःखी हो कर विलाप करने लगे। प्यारी। यह बड़े दुःख की बात है कि तुम्ही ऐसी बातें मुझ से कहती हो क्या तुम्हारी मुसकान भरी प्यारी बातें मुझ पापीको भूल गई हैं हे मन्द मुसकान करने वाली प्यारी, हा! क्या तुम्हें यह बात कहनी उचित थी। ऐसी बात मुंह से कभी न निकालो। मै यह बात कभी नही कर सकता। यह कहकर राजा मुझे धिक्कार है! मुझे धिक्कार है! कहते मूर्छितहो कर पृथ्वीपर गिरपड़े। राजा हरिश्चन्द्र को

पृथ्वी में मूर्छित पड़ा देखकर विलाप करती हुई रानी बोली। हाय ! महाराज ! यह मूर्छा तुम्हें क्यों आई। तुम रेशमी बिछौने पर सोने वाले हो। इस समय पृथ्वी मे क्यों गिर गये ! जिसने करोड़ों गाये और करोड़ों रुपये ब्राह्मणों को दान दिये वही मेरे पति पृथ्वीनाथ आज भूमिपर सो रहे हैं। हा भाग्य ! इसने क्या तुम्हारा अपराध किया था कि तुमने इस विष्णु तथा इन्द्रके समान राजा को इस दशा मे पहुंचा दिया। ऐसा कहकर वह सुन्दर नितम्बो से शोभा पाने वाली महारानी भी पति के असह्य महा दुःख के बोझ से दबकर मूर्छित होगई। पिता माता दोनों को अनाथ की तरह जमीन पर पड़े हुये देखकर वह बालक भूख से घबराकर बोला। हे पिता ! हे तात ! अन्न दो अरी माता अम्मा मुझे भोजन दे। मुझे बड़ी जोर से भूख लग रही है। इसी बीच में महातपस्वी विश्वामित्र आ पहुचे राजा हरिश्चन्द्र को मूर्छित होकर

पृथ्वी में पड़ा देखकर ठण्ढा जल छिड़क कर राजा को होश में लाकर बोले हे राजा उठो, उठो, वह मेरी दक्षिणा दो, जो दूसरे का ऋण अपने ऊपर रखता है। उसका दुःख दिन २ बढ़ता जाता है। ठंढे जल के पड़ने से, राजा होश में आये, पर सामने विश्वामित्र ने क्रोधकर के फिर राजा को मूर्छा छुड़ाई और राजा से बोले कि यदि तुम्हें धर्म का कुछ भी ध्यान है तो मेरी दक्षिणा देदो। सत्य ही से सूर्य तपता है। सत्य ही से पृथ्वी ठहरी है सत्य ही परम धर्म है सत्य ही से स्वर्ग मिलता है। हजार अश्वमेध यज्ञ एक सत्य के साथ तुलापर रखकर तोला गया तब हजार अश्वमेध से एक सत्य ही भारी हुवा अथवा हमें इस धर्मोपदेश करने से क्या मतलब रे अनार्य! पापी! क्रूर! झूठे राजा! तेरे सामने मैं कहता हूं यदि तू आज मेरी दक्षिणा न देगा तो मैं सूर्य के अस्त होने पर तुझे अवश्य शाप दूंगा यह कहकर विश्वामित्र चले गये। उनके ऐसे

कठोर वचनों से दुःखित होकर गरीब और अधम बने हुये राजा बहुत ही डरगये। रानी ने फिर कहा महाराज ! मेरा कहना करो ! नहीं तो ब्राह्मण के शाप की आग से जल कर मर जाओगे। जब रानी ने राजा से बार बार कहकर बहुत आग्रह किया तो उसने कहा प्यारी ! तुम्हारे कहने से मैं निर्दय होकर यह काम करूंगा। बड़े २ निर्दय भी यह काम नहीं कर सकते। देखूं ऐसे वचन मेरे मुंह से निकल सकेंगे या नहीं। राजा अपनी रानी से ऐसा कहकर घबराये हुये नगरमें चले गये और नेत्रों में अश्रु आगये।

गला रुक गया था। जी रोककर राजा ऊंचे स्वर से कहने लगे हे नगर निवासियो ! मेरी बात सुनो ! मुझे क्या पूछते हो कि कौन हो सुनो ! मैं कसाई निर्दय राक्षस हूं बड़ा कठोर हूं। बड़ा पापी हूं। और स्त्री को बेचने के लिये यहां आया हूं। पर निर्लज्जतासे मर नहीं जाता हूं यदि किसी को उसे दासी बनाने की इच्छा हो तो मेरे प्राण रहते बोलो

पृथ्वी में पड़ा देखकर ठण्ढा जल छिड़क कर राजा को होश में लाकर बोले हे राजा उठो, उठो, वह मेरी दक्षिणा दो, जो दूसरे का ऋण अपने ऊपर रखता है। उसका दुःख दिन २ बढ़ता जाता है। ठंढे जल के पड़ने से, राजा होश में आये, पर सामने विश्वामित्र ने क्रोधकर के फिर राजा की मूर्छा छुड़ाई और राजा से बोले कि यदि तुम्हें धर्म का कुछ भी ध्यान है तो मेरी दक्षिणा देदो। सत्य ही से सूर्य तपता है। सत्य ही से पृथ्वी ठहरी है सत्य ही परम धर्म है सत्य ही से स्वर्ग मिलता है। हजार अश्वमेध यज्ञ एक सत्य के साथ तुलापर रखकर तोला, गया तब हजार अश्वमेध से एक सत्य ही भारी हुवा अथवा हमे इस धर्मोपदेश करने से क्या मतलब रे अनार्य! पापी! क्रूर! झूठे राजा! तेरे सामने मैं कहता हूं यदि तू आज मेरी दक्षिणा न देगा तो मैं सूर्य के अस्त होने पर तुझे अवश्य शाप दूंगा यह कहकर विश्वामित्र चले गये। उनके ऐसे

ऐ राजपुत्र ! मुझे मत छू मैं अब छूने लायक नहीं हूं। यह बालक माता को जाते देखकर मामा कहता पीछे दौड़ा। उसको आता देखकर ब्राह्मण ने उसे लात से मारा तो भी उस बालक ने पीछा न छोड़ा। रानी ने ब्राह्मण से कहा हे नाथ ! आप कृपाकर इस बालक को भी खरीद लीजिये मैं बिक-चुकी हूं तो भी इस के बिना कोई काम नहीं कर सकती ! मुझ सी अभागिनी दासी पर कृपाकर इस लड़के को मेरे साथ करदीजिये जिस प्रकार गाय को अपना बछड़ा प्यारा होता है उसी प्रकार मुझ अभागिनी को यह बालक प्यारा है। यह धन लो मुझे बालक दे दो। धर्मशास्त्र जानने वाले मनुष्यों ने स्त्री पुरुष का दाम सौ हजार लाख वा करोर तक ठहराया है। ऐसा कहकर वह धन राजा के बलकलको छोरमें बाँधकर रानी और बालक दोनों को लेकर वह ब्राह्मण चलदिया अपनी स्त्री और पुत्र को जाते देखकर राजा बड़े दुःख से विलाप करने लगा। जिसे वायु सूर्य

इतने में एक बूढ़ा ब्राह्मण आकर राजा से बोला अपनी स्त्री मुझे दो मैं दासी बनाऊंगा और तुम्हें रुपये दूंगा मेरे पास बहुत धन है मेरी स्त्री बहुत ही सुकुमार है घर का कोई काम नहीं कर सकती इससे इसे मुझे देदो। अपनी स्त्री के काम करने की, योग्यता उमर रूप और स्वभावके अनुसार उचित मूल्य लेकर अपनी स्त्री मुझे देदो। ब्राह्मण की ऐसी बात सुनकर राजा हरिश्चन्द्र की छाती दुःख से फटने लगी पर वह ब्राह्मण से कुछ न बोल सके। वह ब्राह्मण राजा के वल्कल की छोर में रुपये की गठड़ी बांधकर रानी की चोटी पकड़कर खींचकर ले चला। अपनी माता को जाते देखकर बालक रोहिताश्व अपनी मा का आंचल पकड़कर रोने लगा। दोनो ओर की खैंचा खेंची से उसके सिर के बाल बिखर गये। रानी ने ब्राह्मण से कहा। हे भगवन्! मेरी चोटी छोड़ दीजिये एक बार मै अपने बच्चे को फिर देखलूं फिर इसका दर्शन दुर्लभ हो जायगा। ऐ बच्चा आ इधर देख मैं तुम्हारी माता इस ब्राह्मण की दासी बन गई।

हरिश्चन्द्र ने कहा भगवन्! मैं और भी दक्षिणा दूंगा कुछ समय तक धैर्य रखिये इस समय मेरे पास धन नहीं है। यह रुपये तो स्त्री और पुत्र को बेचकर मैंने आप को दिये हैं। देखो एक पहर रह गया है। उतनी ही देर तेरी बाट देखूंगा फिर कुछ न सुनूंगा। ऐसी कठोर बातें राजा से कहकर विश्वामित्र वह धन लेकर तुरन्त ही वहाँ से चले गये। उनके चले जाने पर राजा भय तथा शोकके समुद्र मे डूब गया। फिर सब की ओर देख कर गर्दन नीची करके बड़े जोरसे चिल्लाकर कहने लगा। जो मुझे खरीदकर दास बनाना चाहे वह सूर्य के रहते २ कहे। इतने में धर्म चाण्डाल का रूप धरकर आया। उसकी देह से दुर्गन्धि निकल रही थी। अङ्ग अङ्ग में विकार था देह का चमड़ा बहुत रूखा था दाढ़ी मोछ बहुत बढ़ गई थी बड़े बड़े दांत मुंह से बाहर निकल आये थे। उसे देख घृणा होती थी। वह काला और उसका पेट बहुत लम्बा था। पीली और डरावनी आँखे थीं

चन्द्रमा तथा और कोई बाहर के मनुष्य न देख पाते थे वही आज दूसरे की दासी बन गई। सूर्यवंश में उत्पन्न और अत्यन्त सुकुमार मेरा बालक आज बिक गया। मेरे जैसे नीच को धिक्कार है, हा प्यारी! हा पुत्र! मेरी नीचता से तुम दोनों इस दशा को पहुंच गये और मैं मर नहीं गया। इस से मुझे धिक्कार है। राजा इस तरह विलाप कररहे थे कि वह ब्राह्मण दोनों को लेकर शीघ्र बड़े बड़े वृक्षों और घरों आदि की ओट में होकर राजा की दृष्टि से बाहर होगया पीछे विश्वामित्र आकर राजा से रुपये मांगने लगे हरिश्चन्द्र ने वह धन उन्हें दे दिया। स्त्री को बेचकर पाया हुवा धन विश्वामित्र की समझ में बहुत थोड़ा था इस कारण वह क्रोधकर के शोकाकुल राजा से बोले। हे क्षत्रिय! यदि तू इतनी ही दक्षिणा को हमारी पूरी दक्षिणा समझता है तो तुरन्त ही तू हमारा बल देख मेरे किये हुये तप असल ब्राह्मणत्व उग्र प्रभाव और शुद्ध वेद पाठ का तेज देख।

हरिश्चन्द्र ने कहा भगवन्! मैं और भी दक्षिणा दूंगा। कुछ समय तक धैर्य रखिये इस समय मेरे पास धन नहीं है। यह रुपये तो स्त्री और पुत्र को बेचकर मैंने आप को दिये है। देखो एक पहर रह गया है। उतनी ही देर तेरी बाट देखूंगा फिर कुछ न सुनूंगा। ऐसी कठोर बातें राजा से कहकर विश्वामित्र वह धन लेकर तुरन्त ही वहाँ से चले गये। उनके चले जाने पर राजा भय तथा शोकके समुद्र मे डूब गया। फिर सब की ओर देख कर गर्दन नीची करके बड़े जोरसे चिल्लाकर कहने लगा। जो मुझे खरीदकर दास बनाना चाहे वह सूर्य के रहते २ कहे। इतने मे धर्म चाण्डाल का रूप धरकर आया। उसकी देह से दुर्गन्धि निकल रही थी। अङ्ग अङ्ग मे विकार था देह का चमड़ा बहुत रूखा था डाढ़ी मोछ बहुत बढ़ गई थी बड़े बड़े दांत मुंह से बाहर निकल आये थे। उसे देख घृणा होती थी। वह काला और उसका पेट बहुत लम्बा था। पीली और डरावनी आँखे थीं

चन्द्रमा तथा और कोई बाहर के मनुष्य न देख पाते थे वही आज दूसरे की दासी बन गई। सूर्यवंश से उत्पन्न और अत्यन्त सुकुमार मेरा बालक आज बिक गया। मेरे जैसे नीच को धिक्कार है, हा प्यारी! हा पुत्र! मेरी नीचता से तुम दोनों इस दशा को पहुंच गये और मैं मर नहीं गया। इस से मुझे धिक्कार है। राजा इस तरह विलाप कररहे थे कि वह ब्राह्मण दोनों को लेकर शीघ्र बड़े बड़े वृक्षों और घरों आदि की ओट से होकर राजा की दृष्टि से बाहर होगया पीछे विश्वामित्र आकर राजा से रुपये मांगने लगे हरिश्चन्द्र ने वह धन उन्हें दे दिया। स्त्री को बेचकर पाया हुवा धन विश्वामित्र की समझ में बहुत थोड़ा था इस कारण वह क्रोधकर के शोकाकुल राजा से बोले। हे क्षत्रिय! यदि तू इतनी ही दक्षिणा को हमारी पूरी दक्षिणा समझता है तो तुरन्त ही तू हमारा बल देख मेरे किये हुये तप असल ब्राह्मणत्व उग्र प्रभाव और शुद्ध वेद पाठ का तेज देख।

जल जाना अच्छा पर चाण्डाल के वश में रहना अच्छा नहीं इस प्रकार दोनो से बात चीत हो ही रही थी कि विश्वामित्र आ पहुंचे। वह महान क्रोध से आंखे लाल करके राजा से बोले। यह चाण्डाल यदि तुम्हे खरीदने के लिये पूरा धन देता है तो क्यों नही इस के हाथ बिककर मेरी सारी दक्षिणा चुकाते। हरिश्चन्द्र ने कहा—भगवन् ! मैं अपने को सूर्यवंश में उत्पन्न समझताहूं तो कैसे धन के लालच से चाण्डाल की नौकरी करूं। विश्वामित्र ने कहा कि यदि तू इसी समय चाण्डाल के हाथ बिककर मेरी दक्षिणा नहीं चुका देगा तो मैं तुरन्तही अवश्य शाप दे दूंगा। यह बात सुनकर राजा चिन्ता में डूब गये। और घबराकर प्रसन्न हूजिये प्रसन्न हूजिये कहते हुये विश्वामित्र के पैरों पर गिरपड़े। और बोले कि हे विप्रर्षि ! मैं आपका दास हूं आर्त हूं। भय से कातर हूं और विशेष कर आपका सब काम करने वाला सेवक हूं। आप मुझ पर प्रसन्न हों।

उसकी बोली बड़ी कठोर थी बहुत से पक्षी मारकर एक हाथ में लटकाये हुये था उस के गले मे मुण्डों की माला लटक रही थी दूसरे हाथ में आदमी की खोपड़ी थी उसका मुंह बहुत बड़ा था सूरत डरावनी थी उस का मुंह बहुत लम्बा था वह बहुत जोर जोर से बोलता था साथ में बहुत से कुत्ते थे हाथ मे बड़ी भारी लाठी थी।

अत्यन्त विकराल भयावना वह चाण्डाल राजा के पास जाकर बोला मैं तुम्हे खरीदना चाहता हूं तुम तुरन्त ही अपना दाम बताओ थोड़ा या कितना देने से तुम मिलोगे। उस डरावनी मूर्ति और कठोर बचन वाले चांडाल को देखकर राजा ने पूछा तुम कौन हो। चाण्डाल ने जवाब दिया कि मैं चाण्डाल हूं मुझे काशी के लोग "प्रवीर" कहते हैं। मैं वध्य का वध करने वाला और मरे हुये आदमियों का कफन लेने वाला हूं हरिश्चन्द्र ने कहा मैं चाण्डाल का दास नहीं बनूंगा यह बात बड़ी निन्दा की है। शाप की आग से

का दास होकर पाप दशा में पड़ा हूं। राज्य नाश हुआ, मित्र छूटे, स्त्री पुत्र बिकगये और अन्त को मै चाण्डाल हुआ। हाय! दुःख पर दुःख पड़ते है। राजा दरिद्र होकर इस तरह नित्य ही अपने प्रिय पुत्र तथा प्राणप्यारी स्त्री की याद करते रहे पीछे राजा हरिचन्द्र स्मशान मे मुर्दों का कफन लेने के लिये रखे गये। चाण्डाल ने उन्हे आज्ञा दी कि तुम कफन लेने के लिये उस मरघट मे सदा रहकर मुर्दोंकी ओर देखते रहो। मुर्दों के कफन आदि से जो धन मिले उसका छटा हिस्सा राजा को देना होगा। तीन हिस्से मुझे, शेष दो भाग तुम्हारे वेतन में तुम्हें मिलेंगे। इस प्रकार समझाकर राजा को काशी के दक्षिण दिशा के मरघट मे भेज दिया वहां हजारों गीदड़ डरावनी चिल्लाहट मचा रहे थे। मुरदों की खोपड़ियां पड़ी थीं दुर्गन्ध फैल रही थी। चारो ओर धुआ छारहा था। पिशाच भूत वैताल डाकिनी और यक्ष नाच रहे थे, गिद्ध चील और

चाण्डाल के संग रहना बड़ा दुःखदायी मालूम पड़ता है। शेष रुपयों के लिये मैं आपका दास बनूंगा। आपकी आज्ञा में रहूंगा आपका सब काम करूंगा विश्वामित्र ने कहा यदि तू मेरा दास बन गया तो मैं तुझे इसी चाण्डाल के हाथ एक अरब रुपये लेकर बेच देता हूं। उस डोम ने बहुत ही प्रसन्न मन से रुपये विश्वामित्र को देकर राजा को बांध लिया और अपने घर को चला। राजा स्त्री पुत्र के वियोग से बहुत ही कातर था। बड़ा ही दुःखी था। ऊपर से उस चाण्डाल ने उसके एक लकड़ी मारी इस से वह और भी व्याकुल हो गया। पीछे हरिश्चन्द्र चाण्डाल के घर रहने लगे। वह सवेरे दोपहर और सन्ध्या को सोचता मेरी दीन रानी अपने दीन पुत्र के सामने बैठकर, सोचती होगी कि राजा धन उपार्जन करके ब्राह्मण को इससे अधिक धन देकर हम दोनों को छुड़ालेंगे। पर हाय! वह मृगनयनी नहीं जानती है कि मैं भी चाण्डाल

कर सिमसिमकर रही थीं। कहीं चिता में मुर्दे आधे जलकर काले हो गये थे। उनके दांत बिखर गये थे मानों वह अपनी देह की दशा देखकर चिता में पड़े हस रहे हैं। आग की चरचराहट गिद्ध की चीख कुटुम्बियों की रुलाई और शृगालों का आनन्द बढ़ रहा था। भूत बैताल पिशाच और राक्षसों के गाने का शब्द प्रलय की भाँति घोर गर्जन करता था भैंस गायों के गोबर की ढेरी लगी थी कहीं चिता की राख की ढेरी मे आग धुक धुककर रही थी। अनेक प्रकार के बलिदान माला दीप आदि खाने को घिरे हुये कौओं के डरावने कोलाहल से वह श्मशान ठीक नरक ही बन रहा था। आग की चरचराहट गीदड़ों का अमङ्गल शब्द और अनेक प्रकार के अशुभ कोलाहल से वहां भय को भी भय होता था।

राजा हरिश्चन्द्र वहां रहकर दुखी मन से सोचने लगे हा मेरे दासो! मेरे मन्त्रियो! मेरे ब्राह्मणो! वह मेरा राज्य कहां चला

कुत्ते इधर उधर घूम रहे थे। हड्डियों की ढेरी लगी थी जहां जाते ही भय शोक महा मोह और कई तरह की शंकायें होने लगती थी। चारों ओर हाहाकार मच रहा था जिस के सुनते ही करुणा हो आती थी। विराग का क्षय और ज्ञान का नाश हो जाता था। ब्रह्मा ने पापियों के लिये प्रगट दण्ड का स्थान ही मानों बना रखा था लोक गुरू विधाता ने लोककी शिक्षा के लिये यह कराल काल का क्रीड़ा बन गया था। जहां मूर्खों को डर होता था ज्ञानियोंको शान्ति मिलती थी वहाँ शोक दुःख और सुख सब का नाश हो जाता है। मरे हुये आदमियों के परिवार के लोगों की रुलाई सुन पड़ती थी। हा बेटा! हा मित्र! हा भाई। हा प्यारे! हा प्रिय! हा पति! हा प्यारी! हा बहिन! हा माता! हा पिता! हा पोते! तुम कहां चले गये।

इस प्रकार रोने की ध्वनि कानों में पड़ रही थी। कहीं चिता में मांस मेद मज्जा जल

कर सिमसिमकर रही थीं। कहीं चिता में मुर्दे आधे जलकर काले हो गये थे। उनके दांत बिखर गये थे मानो वह अपनी देह की दशा देखकर चिता मे पड़े हँस रहे हैं। आग की चरचराहट गिद्ध की चीख कुटुम्बियों की रुलाई और शृगालों का आनन्द बढ़ रहा था। भूत बैताल पिशाच और राक्षसों के गाने का शब्द प्रलय की भाँति घोर गर्जन करता था भैंस गायों के गोबर की ढेरी लगी थी कहीं चिता की राख की ढेरी मे आग धुक धुककर रही थी। अनेक प्रकार के बलिदान माला दीप आदि खाने को घिरे हुये कौओं के डरावने कोलाहल से वह श्मशान ठीक नरक ही बन रहा था। आग की चरचराहट गीदड़ों का अमङ्गल शब्द और अनेक प्रकार के अशुभ कोलाहल से वहां भय को भी भय होता था।

राजा हरिश्चन्द्र वहां रहकर दुखी मन से सोचने लगे हा मेरे दासो! मेरे मन्त्रियो! मेरे ब्राह्मणो! वह मेरा राज्य कहां चला

गया। हा प्यारी तारा! हा पुत्र रोहताश्व! विश्वामित्र के दोष से मुझ मन्दभागी को छोड़कर कहां गये। इस तरह सोचते और चाण्डाल की बात याद रखते हुए रहने लगे उनका रूप मलिन हो गया समूची देह रूखी हो गई बाल बढ़गये दुर्गन्ध आने लगी हड्डियां निकल आईं। हाथमें लाठी लेकर काल की मूर्त्ति धारण कर मरघट में इधर उधर दौड़ने लगे और कहने लगे कि इस मुर्दे से इतने रुपये मिले, इस मुर्देसे इतने मिलते है। और इस मुर्दे से इतने मिलेंगे। इस में इतना मेरा भाग है इतना राजा को देना होगा और इतना मेरे स्वामी चाण्डाल का है! इस तरह मुर्दों का कर लेते देते उन का जीवन बीतने लगा। कुछ दिनों में राजा चाण्डाल ही बन गये। पुराने कपड़ों की गुदड़ी बनाकर ओढे हुये रहते थे और अपने शरीर में चिता की राख लपेटते थे। अनेक तरह चर्बी मेद मज्जा आदि का लेप हाथ पैरों में लगाते थे। मुर्दों के साथ आये हुये चावलों का भात बना

कर पेट भरते थे मुर्दों के शरीर से मालायें लेकर अपने सिर पर लपेटते थे। रात दिन जागते थे और हाय हाय करते इधर उधर दौड़े फिरते थे। यों बारह महीने बीत गये जो सौ वर्ष के समान कटे। महाराज एक दिन अपने घर के लोगों के लिये शोक करते थे रूक्ष शरीर भूखे प्यासे दु:ख से सो गये। और पड़े पड़े स्वप्न देखने लगे।

चाहे स्मशान मे सोने का अभ्यास होने के कारण चाहे दैवबलसे उन्होंने देखा कि अन्य देह धारण कर के गुरु को दक्षिणा देके बारह वर्ष दु:ख भोग के मुक्ति होगी। पीछे उन्हों ने देखा कि मानों स्वयं चाण्डाली के गर्भ में हैं। वहां सोचने लगे कि इस चाण्डाली के गर्भ से निकल कर मै दान धर्म्म करूंगा। पीछे वह चाण्डाली के गर्भ से जन्मे तब स्मशान के मुर्दों को जलाने मे निरन्तर रत हुये। जब वह चाण्डाल बालक के वेश में सात वर्ष के हुये तो एक गुणवान ब्राह्मणकी लाश उस के कुटुम्बी स्मशान में लाये। उस

सात साल के चाण्डाल बालक ने मुर्दे जलाने का कर न देने के कारण उन ब्राह्मणों का बड़ा अपमान किया। उन्होंने कहा कि हाय विश्वामित्र ने कैसा अशुभ पाप भरा काम किया। रे पापी! तू इसी प्रकार के अशुभ काम किया कर! तू पूर्वजन्म में राजा हरिश्चन्द्र था ब्राह्मण का ऋण न देने से तेरा पुण्य नाश हुआ। और विश्वामित्र के शाप से तूने चाण्डाल के घर मे जन्म लिया जब वह ब्राह्मण मुर्दों का कर देने में असमर्थ होकर शव दाह न कर सके तो उन्होंने बिगड़ कर शाप दिया कि रे नराधम! तू अभी घोर नर्क मे चला जा। ब्राह्मण के मुंह से यह वाक्य निकलते ही, राजा ने देखा कि अत्यन्त भयङ्कर यमदूत हाथ मे पाश लिये आते हैं। और भी देखा कि उन यमदूतों ने राजा को पकड़ लिया। तब वह बहुत दुःख से पुकारने लगा कि हा माता! हा पिता। आज मेरी यह दशा हुई-इस प्रकार पुकारते ही थे यमदूतों ने उन्हें पकड़ कर गर्म तेल के कढ़ाई में

डाल दिया फिर तीखे कुल्हाड़े से मारने लगे घोर अन्धेरे में दुःखित चित्त से पीप और लहू का भोजन करना पड़ा। अपने चाण्डाली के गर्भ के उत्पन्न हुये सात वर्ष के बालक रूपी मृत शरीर की यह दशा राजा स्वप्न में देखने लगे मानों दिन दिन नर्कही में कभी जलना पड़ता है कभी पकना पड़ता है। कभी खिन्न और कभी क्षुब्ध रहना पड़ता है कभी मारे जाते है कभी काटे जाते है कभी घोटे जाते है। कहीं गर्मी कहीं शीत और कहीं वायु से आहत होते है। वहां एक एक दिन सौ सौ वर्ष के बराबर बीतने लगा। इस प्रकार कष्ट भोगते २ नर्क के मुंह से राजा ने सुना कि उसके सौ वर्ष पूरे हो गये। तब यमदूतो ने उन्हें पृथ्वी पर पटक दिया और वहां विष्ठा भोजी कुत्ता बने अन्त मे विष्ठा और उलटी खाते २ शीत से अत्यन्त क्रान्त होकर एक महीना मे प्राण त्याग दिया।

तब राजा ने देखा कि उन्हें गधे की योनि मिली है। पीछे क्रम से हाथी बन्दर

बकरी बिल्ली गाय भेड़ पक्षी कीड़े मछली कछुये मुर्गे शुक सारिका और अजगर आदि नाना प्रकार के जीवोँ की योनि में जन्म लिया। इस प्रकार क्लेश भोगते हुये एक एक दिन सौ सौ वर्ष की भाँति बीतने लगा। योँ नाना प्रकार की इतर योनियों में जन्म लेकर क्लेश भोगते हुये पूरे सौ वर्ष बीतगये तब राजा ने देखा कि अपने कुल में जन्म लिया और फिर राजा हुये हैं। वहां एक वार जुआ खेला उसमें स्त्री पुत्र सब हारकर अकेले वन को जाना पड़ा। यहाँ देखा कि एक सिंह मुंह फैलाये उन्हें खाने को आता है। पीछे उस सिंह ने राजा को पकड़ लिया और फाड़कर खाने लगा। राजा पुकारने लगे हा रानी तारा मुझ दुःखित को छोड़कर तुम कहां जाती हो। जब राजा इस प्रकार विलाप करने लगे तो देखा कि रानी तारा कहती है हा महाराज हरिश्चन्द्र ! हमारी रक्षा कीजिये। प्रभो ! आप को जुये से क्या प्रयोजन देखिये आपकी रानी तारा पुत्र

सहित कैसी शोचनीय दशा मे पडी है। यह सुनकर राजा इधर उधर दौड़ने लगे और उन्हें कुछ दिखाई न दिया।

राजा हरिश्चन्द्र ने देखा कि मानों स्वर्ग मे हैं। वहा रहते रहते देखा कि दीन हीन वस्त्र हीन बिखरे हुये बालों वाली तारामती को कोई बल पूर्वक छीने लिये जाता है। और रानी "हा महाराज रक्षा करे।" कहती हुई पुकारती है। राजा ने और देखा यमदूत यमराज के शासन से आकाश मे स्थित हो कर कहरहे हैं कि राजा! विश्वामित्र ने यमराज को कह दिया है कि आप को नर्क में बुलावे सो आपको बुला रहे हैं। चलिये, यह बात सुनकर राजा इसपर रोनेलगे फिर देखा कि यमदूतोंने सर्पपाशसे राजाको बांध लिया और घसीटकर ले चले यमराज कहता है कि यह विश्वामित्र का चरित्र है। स्वप्न मे राजा हरिश्चन्द्र इस प्रकार बहुत से कष्ट भोगते हैं। तथापि उनके मन मे किसी का अधर्म्म भरा विकार नहीं उठता है इस प्रकार

के क्लेश भोगते भोगते स्वप्न में बारह वर्ष बीत गये। तब यम के दूत उन्हें बल पूर्वक बांधकर यमराज के पास खेंच ले गये। यमराज ने उन्हें देखकर कहा हे महाराज! यह महात्मा विश्वामित्र के दुर्निवार्य कोप का फल है। अधिक क्या वही कौशिक मुनि आपके पुत्र को भी मरवा देंगे। इस से आप मनुष्य लोक मे जाकर शेष दुःख भोगिये। वहां बारह वर्ष बीतने पर आपके दुःखों की समाप्ति होगी और तुम्हारा मङ्गल होगा। यम की यह बात सुनकर दूतों ने राजा को नीचे गिरा दिया। वहां से गिरकर राजा भय और घबराहट से जागे। मनमें विचारने लगे कि कटे पर नमक लगाने की भाँति यह और क्या हुवा। स्वप्न में दुःख देखे उनकी तो सीमा नहीं! मैंने जो स्वप्न में बारह वर्ष बीते देखे तो क्या सचमुच बारह वर्ष बीत गये।

राजा ने घबराकर पास के चाण्डालों से पूछा क्या मेरे बारह वर्ष बीत गये किसी

ने कहा नहीं अभी बारह वर्ष नहीं बीते। किसी ने कहा बीत गये होंगे राजा उनके ऐसे कठोर वाक्य सुनकर बहुत दुःखित हुये। देवताओं की शरण जाकर कहने लगे हे देवगण! आप मेरी रानी तारा और मेरे पुत्र की रक्षा करैं सर्व प्रकार धर्म्म को नमस्कार विधाता स्वरूप कृष्ण को नमस्कार। जो सब से श्रेष्ठ पवित्र अव्यय है। उन पुराण पुरुष को नमस्कार! हे वृहस्पति! तुम्हें नमस्कार इन्द्र तुम्हें नमस्कार। इतना कहकर राजा हरिश्चन्द्र फिर नष्ट स्मृति होकर रहने लगे। फिर वैसे ही मलिन वेशी जटाधारी कृष्ण वर्ण हाथ में लाठी लिये विह्वल हो गये। स्त्री पुत्र किसी की सुध न रही। क्योंकि वह उस समय राज नष्ट होने से हतोत्साह होकर श्मशान मे रहते थे।

पीछे हरिश्चन्द्र की रानी तारामती सांप के काटने से मरे हुये अपने पुत्र रोहिताश्वको लेकर रोती हुई उस मरघट मे आई। वहां हा बच्चा हा बेटा! हा! पुत्र इत्यादि

कहकर चिल्लाती हुई शिर पीट पीटकर रोरही थी उसका शरीर सूखा हुआ हुवा, मुंह बिगड़ा हुआ! मन बहुत घबराया हुवा और सिर के बाल धूलि से भरे हुये थे रानी विलाप करती हुई बोली, हे राजा! आज तुम आकर देखो जो बालक तुमने सदा चन्द्रमासा चमकता और खेलता देखा था वह कराल विषधर सांप के काटने से मर कर भूमि में पड़ा है। राजा उसकी रुलाई सुनकर दौड़े कि इस से कफन मिलैगा। वह रोती हुई रानी को न पहिचान सके। क्योंकि वह बहुत दिनों के वियोग से इतनी दुबली होगई थी माना उसका दूसरा जन्म हुआ था। रानी भी राजा को न पहचान सकी क्योंकि पहले रानी ने भी राजा को लटकते हुये घुंघराले बालों तथा सुन्दर मुखसे देखा था! अब राजा सूखे पेड़ के समान नीरस होकर कुरूप हो गये थे। राजा उस सर्प दंशिता बालक को काले कपड़े से ढका देख कर और राजाओं के लक्षण उसके शरीर मे पहचानकर सोचने लगे। जिस राजा के

कुल में यह लड़का पैदा हुआ होगा वह राजा आज बहुत ही कष्ट में पड़ा होगा। हा! कालने इसे भी मारकर उसकी सब आशा नष्ट करदी। इसे देख अपनी माकी गोद मे पड़ा हुवा कमल के समान आंख वाला मेरा बालक रोहिताश्व याद आता है। यदि वह जीता है तो वह मेरा प्रियपुत्र भी इतनी ही उमर का हुआ होगा। रानी विलाप करके कहने लगी हा बेटा! किस पाप से यह भयानक दुःख आकर पड़ा जिस का अन्त नहीं मिलता है। हा नाथ! हा राजा मुझ दुखिया की बिना सुध लिये ही कहां चले गये हो। हा दैव! राज्य का नाश हुआ, मित्रों का संग छूटा स्त्री पुत्र बिक गये, राजर्षि हरिश्चन्द्र के नाश में तुम ने क्या कसर छोड़ी। रानी के यह वचन सुनते ही राजा उठ खड़े हुये। वह समझ गये कि मेरा लड़का मर गया और मेरी स्त्री रो रही है। निश्चय यह मेरी रानी है। और यह मेरा लड़का रोहिताश्व ही मरा है

ऐसे कहते हुये वहां पहुंचकर दुःखित चित्तसे रोने लगे और मूच्छित हो गिर पड़े।

वह रानी भी अपने प्राण प्यारे पति को पहचान गई और उनको वह दुर्दशा देख विलाप करती हुई मूच्छित हो गई थोड़ी देर पीछे दोनों को सुध हुई। वह मारे शोक के विलाप करने लगी। राजा बोले हा बेटा तुम्हारे नेत्र भौंहें नासिका अलकों के विभूषित सुकुमार मुख इस प्रकार मलिन देख कर मेरी छाती फटती है। हा बेटा! अब मधुर स्वरसे पिता कहता हुआ कौन मेरे पास आवैगा और मैं किसे गोदी में लेकर बेटा बेटा कहकर पुकारूँगा कौन अपनी देह में धूलि लपेटे खेलता हुवा मेरी गोद में आकर मेरी चादर देह तथा कपड़े मैले करेगा। हा! अङ्ग २ से उतपन्न और मन तथा हृदय को आनन्दित करने वाले लड़के को मैंने कुवस्तु की भांति बेच दिया। हा बेटा मैं तुम्हारा पिता बड़ा ही नीच हूं। हा! दैवरूपी दुष्ट सांप ने धन धान्य सहित मेरा बड़ा भारी

संपूर्ण राज्य नष्ट कर के अन्त में मेरे प्यारे लड़के को भी खालिया। प्रतिकूल भाग्यरूपी सांप के काटे हुए इस लड़के का मुख देख कर मैं भी घोर हलाहल से अन्धा हो गया हूं। ऐसा कहकर उस बालक को गोद में लेकर लड़खड़ाते स्वर से रोने लगे। और मूर्च्छित होकर गिर पड़े रानी ने कहा! बोली से जान पड़ता है कि यह वही पुरुष सिंह विद्वानों के चित्त को आनन्द देने वाला हरिश्चन्द्र है इसमें सन्देह नहीं इस पवित्र कीर्ति राजा की नाक ऊंची और आगे को कुछ झुकी हुई सी है। दांत फूल की कलियों के समान सुन्दर हैं। यह राजा मरघट मे क्यों आया है! रानी पुत्र शोक भूलकर अपने मूर्च्छित पति को देखने लगी अत्यन्त आश्चर्यमें पड़ी हुई दीन हो पति को देखने लगी तथा पुत्र के शोक से दुःखिनी विशाल नयनी रानी अपने पति के हाथमें चाण्डाल की छड़ी देखकर "मैं चाण्डालिनी होगई" कहकर बेसुध होगई फिर धीरे २ होश मे

आकर गद्गद् स्वरसे कहने लगी अरे मर्यादा रहित नीच निर्दय दैव तुझ को धिक्कार है तू ने देवता समान राजा को निर्दय दैव चाण्डाल बना दिया। तू राज्य का नाश करा के मित्रों का संग छुड़ाकर स्त्री पुत्रको बिकवा कर भी प्रसन्न न हुवा तूने राजाको चाण्डाल बनाकर छोड़ा। हे राजा! मैं क्या कहूं मैं दुःख से विकल भूमि में पड़ी हूं मुझे उठाकर पलंग पर बिठाओ। हे राजा! आज क्या भाग्य बदल गया। आज तुम्हारा छत्र चँवर कहां है। व्यञ्जन कहां है जिसके चलते समय बड़े २ राजा दास बनकर अपनी चादर से मार्ग की धूलि हटाते थे। वही हरिश्चन्द्र आज श्मशान में पड़े हैं। जहां आदमियों की छोटी बड़ी खोपड़ियों के ढेर पड़े हैं मुर्दों के सिर ने लिपटी हुई मालाओं में केश बिखर कर लटकते हैं। मुर्दों की चरबी पिघलकर भूमि पर चमड़े की चादर सी बन गई है अधजली हुई हड्डियां जगह जगह पड़ी है। गिद्ध सियारों की डरावनी

चिल्लाहट से छोटी छोटी चिड़ियां उड़ गई हैं। चिता के धुंये से चारो ओर कालिमा छागई है। खून और मेद मज्जा पीकर निशाचर आनन्द से नाच रहे है ऐसी अशुद्ध भूमि मे राजा अकेले भटकते फिरते हैं ऐसा कहकर सैकड़ों शोक से भरी हुई रानी राजा की गरदन से लगकर बड़ी करुणासे रोने लगी।

हे राजा! यह मै स्वप्न देखती हूं या सत्य आप कृपाकर ठीक ठीक बताइये मेरी तो बुद्धि ठिकाने नही। यदि यह सत्य है तो हे धर्मज्ञ! मै जान गई कि धर्म कुछ सहायता नही करता और देवता तथा ब्राह्मणो की पूजा एवं धर्म पूर्वक पृथवी का पालन करना व्यर्थ ही है। न धर्म है न सत्य है न दया है और न क्षमा है कुछ भी काम नही आता है हा! तुम से धर्मात्मा का राज्य गया! रानी की यह बात सुनकर राजा ने लम्ब सांस लेकर अपने चाण्डाल होने की सब बातें सुनाई। पुत्र शोक बिहूला रानी ने भी उत्तप्त साँसे

लेकर दुःख भरी दीन वाणी से पुत्र मरण की बात कही। राजा ने कहा हे प्यारी! अब यह कठिन दुःख सहा नहीं जाता। हा कष्ट मैं कैसा अभागा हूं कि मेरी देह भी अपने वश नहीं है यदि मैं चाण्डाल की आज्ञा लिये बिना चिता में जल जाऊं तो फिर चाण्डाल के घर में पैदा होकर चाण्डाल का दास बनना पड़ेगा अथवा नरक में पड़कर कीड़े खाने वाला जीव बनूगा। पीब मज्जा चर्बी मेद आदि से भरे नरक या वैतर्णी मे डूब जाऊंगा। या महा रौरव में डालकर तपाया जाऊंगा या असिपत्रबन मे जाकर बड़ी कठोरता से काटा जाऊंगा। ऐसे दुःख समुद्र में पड़कर मर जाना ही पार होना है यह एक लड़का हम लोगों का वंश चलाने वाला था वह भी मेरे अभाग्यरूपी जल के वेग से उसी दुःख समुद्र मे डूब गया मैं ऐसा दुःख पाकर भी पराधीन होनेके कारण प्राण भी नहीं त्याग सकता। अथवा जब आदमी बड़ा दुःखित हो जाता है तब पाप को कुछ

भी नहीं गिनता। पक्षी होने में वह दुःख नहीं है और असिपत्रवन में भी वह कष्ट नहीं है, वैतरणी मे भी वह दुःख नहीं है। जो दुःख पुत्र के मरने में है। मैं अवश्य अपने पुत्र की घधकती हुई चिता में जल कर मर जाऊंगा। प्यारी! मेरे अपराध को क्षमा करना। हे मन्द मुसुकाने वाली प्यारी, मै तुम्हें आज्ञा देता हूं, तुम ब्राह्मण के घर लौट जाओ मेरा वचन मानो। यदि मैने दान हवन किया हो और अपने बड़ों को प्रसन्न किया हो तो अवश्य ही स्वर्ग मे तुम से और पुत्र से मिलूंगा। इस जन्म मे इस अभिप्राय की सिद्धि की सम्भावना नहीं रही। अथवा तुम भी मेरे साथ उसी मार्ग को चलो जिस से पुत्र गया है। हे पवित्र हास करने वाली! मैने यदि कभी हंसी मे भी तुम्हे अनुचित बात कही हो तो उसे क्षमा करना यही प्रार्थना है।

हे कल्याणी! अपने को रानी समझकर उस ब्राह्मण का भी अनादर मत करना।

सब तरह देवता की भांति उसको सेवा करना। रानी ने कहा महाराज मुझ से भी अब दुःख सहा नहीं जाता इससे मैं भी तुम्हारे ही साथ अपने पुत्र की चिता में जल जाऊंगी। दोनों एक ही साथ रहकर स्वर्ग और नर्क भोगेंगे। राजा ने कहा अच्छा। पीछे राजा ने चिता बनाकर उसपर अपने लड़के को रक्खा और रानी सहित हाथ जोड़ कर परमात्मा ईश्वर वासुदेव, परमेश्वर, को स्मरण किया। उस समय इन्द्र आदि देव धर्म को आगे करके वहां झटपट आ पहुंचे वह सब बोले हे राजेन्द्र सुनो। यह साक्षात् पितामह है यह भगवान् धर्म है। यह साध्य-गण है और अनेक देवताओं के सहित वह विश्वामित्र जी भी पधारे हैं। जिनका तीनों लोकों में कोई मित्र नहीं है। आज यह सब तुम से मित्रता करने और तुम्हारा मनोरथ पूरा करने आये हैं। पीछे धर्म इन्द्र और विश्वामित्र राजा के समीप आये धर्म ने कहा राजन्! ऐसा साहस मत करो

मैं धर्म हूं तुम्हारी सहन शीलता इन्द्रिय दमन सत्य आदि गुणसे प्रसन्न होकर तुम्हारे पास आया हूं। इन्द्र ने कहा हे महाभाग राजा हरिश्चन्द्र! मै इन्द्र हूं तुम्हारे पास आया हूं तुम और तुम्हारा स्त्री पुत्र ने तीनों लोक जीत लिये। हे राजा! अपनी स्त्री और पुत्र के संग अपने कर्म से जीते हुये स्वर्ग मे चलो जो दूसरे के लिये दुर्लभ है। फिर इन्द्रदेव ने चिता के पास खड़े होकर मृत्यु का नाश करने वाले अमृत की वर्षा की, फूलों की वर्षा होने लगी देवतागण दुन्दुभी बजाने लगे। तब सब के देखते २ सुकुमार रोहिताश्व स्वस्थ होकर चिता से उठ खड़ा हुवा। उसका शरीर खिला हुवा था सब इन्द्रियां तथा मन प्रसन्न था। राजा रानी ने हर्ष से पुत्र को उठाकर गले लगाया और दिव्य वस्त्र और मालाये धारण करके पत्नी सहित शोभा पाने लगे। और स्वस्थ होकर अत्यन्त आनन्दित हुये। फिर इन्द्र ने कहा कि महाभागे हरिश्चन्द्र! आप स्त्री

पुत्र सहित परम सद्गति लाभ करेगें इससे अपने कर्मों से जीते हुये स्वर्ग में स्त्री पुत्र सहित चले। इस प्रकार सत्य और धर्म से हरिश्चन्द्र को स्वर्ग मिला।

प्यारी बहिनों !

देखो इस प्रकार धर्म की रक्षाकर सत्य को अपना हितू समझकर हरिश्चन्द्र और उनकी प्यारी स्त्री ने कैसे कैसे कष्ट सहकर स्वर्ग धाम पाया अतएव मनुष्य मात्र को इसी प्रकार अपने इस लोक और परलोक सुधार के लिये धर्म पर दृढ़ रहना चाहिये।

---

# लोपामुद्रा

( २ )

यह विदुषी सती प्राचीन समय में विदर्भराज के घर जन्मी थी प्राचीन समयमें पढ़नेयोग्य अवस्था होने पर पुत्र व पुत्री दोनों, लोपामुद्रा को भी उसके पिताने विद्याध्ययन कराया वह बड़ी विदुषी और सद्गुणी हो गई। लोपामुद्रा के पिता को समृद्धि और शक्ति बहुत थी परन्तु वह अन्य राजकन्याओं की भांति न तो अपने पास बहुत सी दासी रखती थी और न अपना शरीर हीरे मोती जड़े सुवर्ण के अलंकारों और रेशमी वस्त्रों से आभूषित रखती थी। उसको विशेष रुचि सदैव विद्या पर रहती थी। वह अपना अधिक समय विद्या की वृद्धि मे ही व्यतीत करती थी और अपना जन्म इसी से सफल समझती थी।

पुत्र सहित परम सद्गति लाभ करैगें इससे अपने कर्मों से जीते हुये स्वर्ग में स्त्री पुत्र सहित चले। इस प्रकार सत्य और धर्म से हरिश्चन्द्र को स्वर्ग मिला।

प्यारी बहिनों !

देखो इस प्रकार धर्म की रक्षाकर सत्य को अपना हितू समझकर हरिश्चन्द्र और उन की प्यारी स्त्री ने कैसे कैसे कष्ट सहकर स्वर्ग धाम पाया अतएव मनुष्य मात्र को इसी प्रकार अपने इस लोक और परलोक सुधार के लिये धर्म पर दृढ़ रहना चाहिये।

---

सती लोपामुद्रा पति की आज्ञानुसार चलती थी। उस की छाया की तरह सदैव साथ रहती और अपनी इच्छा से कोई काम नहीं करती थी पतिको भोजन करा देती तब पीछे आप करती, पति सो जाता तब आप सोती और उससे पहिले उठ बैठती। पति कोई बात कहता तो धैर्य्य के साथ सुनती और विचार पूर्वक उचित उत्तर देती। पति को योग्य सम्मति और सहायता देती रहती। कभी असन्तुष्ट नहीं होती। वचन और कर्म्म से पति सेवा का जो व्रत धारण किया उस का पालन जीवन पर्य्यन्त करती रही। उस के ध्यान, ज्ञान का विषय ईश्वर और पति ही था। उस ने अपने पति से तत्वज्ञान प्राप्त किया था और घोर तपश्चर्य्या की थी। वह वेदों की पूरी जानने वाली थी और वेदोंके आचार्योंमें उसकी भी गणना है।

सती लोपामुद्रा के हढस्यु नाम का एक महातेजस्वी पुत्र जन्मा था। बालकपन में ईंधन इकट्ठा किया करता था इस से उसका नाम इध्मवाह पड़ा था। रामायण से पता लगता है कि अगस्त ऋषि का आश्रम

वह विश्वासम्बन्धी ही विचार करती रहती थी। लोपामुद्रा ने राजसमृद्धि वाले वर से विवाह न करके विद्या और तपसमृद्धि वाले महाविद्वान, तेजस्वी, सद्गुणी और तपस्वी महात्मा मित्रावरुण के पुत्र अगस्त्य ऋषि के साथ विवाह किया उस ऋषि के पास जो कुछ समृद्धि थी वह पलाश की लकड़ी का दण्ड, पानी पीने का कमण्डलु, एक वनमें झोपड़ी और पहरने के लिये वलकल वस्त्र थे तो भी लोपामुद्रा ने राज वैभवको तुच्छ समझ कर इसी में सुख माना। अपने पिता से लोपामुद्रा को जो बढिया २ वस्त्रालङ्कार आदि मिले थे उनको दूर फेंककर अपने पति के समान वल्कल वस्त्र धारण किये। सिंह, चीते, रीछ और भेड़िये आदि हिंसक पशुओं से परिपूर्ण वनमे अपने पति के साथ रहने में पूर्ण सुख और आनन्द समझकर उसके पीछे पीछे चली और वहां पहुंच कर अपने स्वामी की सेवा मे एक रूप से दिन रात रहने लगी।

# ताराबाई

( १ )

ताराबाई तथा पृथ्वीराजकी शूरता और वीरता की प्रशंसा राजपूतों में गाये जाते हुए कितनेही एक गीतों तथा कहानियों में प्रसिद्ध है। इसका जन्म सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ था। ताराबाई राय सूरतान बिदनौर वाले की पुत्री थी, कि जो राजपूताने में के एक छोटे राज्य का राजा था। गुजरात की राजधानी अनहल वाडा के सोलंकी वंश के राजाओं का यह एक वंशधर था। इसके पुरुषा तेरहवीं शताब्दी मे अलाउद्दीन से हारकर मध्यदेशमें आय टोंक नाम का जात से टोंक तथा बनास नदी के किनारे का देश छीनकर यहा के अधिकारी हो स्वयं स्वाधीन हो गये थे। किन्तु राजा सूरतानसे अफगान

दण्डकारण्य में था परन्तु महा भारत से उन का आश्रम गया में मालूम होता है। सती लोपामुद्रा ने अपने पति के साथ देश विदेश में बहुत भ्रमण किया था। समुद्र पर्यटन भी बहुत किया था। इसके पति अगस्त्य ऋषिने समुद्र विषयक बड़ी शोध की थी कदाचित् समुद्र विषय शोध करनेके कारणही यह कहा जाता है कि "अगस्त्य समुद्र पी गये"।

देखिये प्राचीन समय की राजपुत्री कैसी कैसी ब्रह्मवादिन हुई हैं जो कि आत्मज्ञान के सामने राजलक्ष्मी को कुछ न समझती थीं। यदि लोपामुद्रा राजवैभव को चाहती तो किसी राजकुमार के साथ विवाह करके सांसारिक ऐश्वर्य भोगती परन्तु उसने ब्रह्मविद्या के सामने धन सम्पत्ति को तुच्छ समझ कर एक ऋषि के साथ विवाह किया और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करती हुई परमानन्द को प्राप्त हुई।

प्यारी बहिनों विद्याज्ञान की बराबर दूसरा कोई आभूषण और धन नहीं है इस लिये व्यर्थ के नकली भूषणों को छोड़कर विद्यारूपी भूषण धारण करो।

# ताराबाई

( १ )

ताराबाई तथा पृथ्वीराजकी शूरता और वीरता की प्रशंसा राजपूतों से गाये जाते हुए कितनेही एक गीतों तथा कहानियों में प्रसिद्ध है। इसका जन्म सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ था। ताराबाई राय सूरतान बिदनौर वाले की पुत्री थी, कि जो राजपूताने में के एक छोटे राज्य का राजा था। गुजरात की राज-धानी अनहल वाडा के सोलंकी वंश के राजाओं का यह एक वंशधर था। इसके पुरुषा तेरहवीं शताब्दी मे अलाउद्दीन से हारकर मध्यदेशमें आय टोंक नाम का जात से टोंक तथा बनास नदी के किनारे का देश छीनकर वहा के अधिकारी हो स्वयं स्वाधीन हो गये थे। किन्तु राजा सूरतानसे अफगान

राजा ने कितने एक देश छीन लिये थे। अन्त में केवल बिदनौर जो कि अर्वली पर्वत की तलहटी में मेवाड़ राज्य की सीमापर है शेष रहगया अपने पिता का राज्य क्षीण होने से दुःखित तथा मलीन देख और पूर्व पुरुषों के ऐश्वर्य को सुन ताराबाई ने स्त्रियों का स्त्रीजाति का पहिरावा पहिरना छोड़ दिया वह योग्य किसी भी वस्त्र आभूषण को धारण नहीं करती थी, पुरुषों के वस्त्र पहिन, शस्त्र धारण कर बालयकाल से ही घोड़ेपर चढ़नेलगी और साथ२ धनुष विद्याका भी अभ्यास करती थी थोड़ेही समयमें अपने बलके द्वारा अफगानों से पिता के ले लिये हुए देशों को छीन लिया और उन में अपनी ही विजय पताका गड़वादी। थोड़े ही समय के अभ्यास में वह धनुष विद्या में इतनी निपुण होगई कि घोड़े पर चढ़ी हुई निशान (लक्ष्य) मारती परन्तु कभी भी न चूकती थी। एक समय उसके पिता ने अफगानों के ऊपर आक्रमण किया, तब एक काठिया-

ाडे घोड़ेपर चढ़कर तारा बाई भी साथ
ई थी, परन्तु शत्रुओं के बलवान होने से
नके सामने उसका कुछ भी पौरुष व परा-
म काम न आया। उसही समय राना
ायमल के तीसरे पुत्र राना जयमल ने तारा
ाई से अपने ब्याह करने का संदेशा कहला
जा। ताराबाई ने उसके उत्तर में निवेदन
िया कि जो मेरे पिता के शत्रुओं को रण
पराजित करेगा उसहीसे मेरा विवाह होगा।
जयमल ने प्रतिज्ञा की अफगानो को
राजय करके ताराबाई से विवाह करूंगा।
ीछे वह मर्यादा को त्यागकर उसके मिलने
र तत्पर हुआ। इतने में राजाने क्रोधित
उसका शिर काट डाला, तदनन्तर उसके
ाई पृथ्वीराज ने प्रतिज्ञा पूर्ण करने का
ीड़ा उठाया और उस कार्य के पूर्ण करने
ो अपनी कमर कसी पृथ्वीराज की प्रशंसा
ो सुनकर ताराबाई ने निश्चयकर लिया था
क मेरे योग्य यही वर है और इसही से
िवाह करूंगी। पिता ने भी इस सम्बन्ध

की ओर से प्रसन्नता प्रगट की और अन्त में उस ही प्रतिज्ञा के पूर्ण करने पर विवाह होना स्थिर हो गया। पृथ्वीराज ने अफगानों पर आक्रमण करने को मुहर्रम का महीना अच्छा समझा क्योंकि यवनलोग इस महीने में ताजिया बनाने तथा उसही के व्यवसाय मे लिपटे रहते हैं। तदनन्तर मुहर्रमका महीना आनेपर वह पांच सै। चतुर और साहसी घुड़सवार ले उसही समय उन की राजधानी पर पहुंचा कि जिस समय वह ताजियों को बाहर चौक में निकाल लाये थे। रानी ताराबाई भी उस समय अपने होनहार पति के सग पुरुषों के वस्त्र धारण किये घोड़े पर सवार हो अस्त्र शस्त्र धारण किये उपस्थित थी। ताराबाई और पृथ्वीराज एक बड़े साहसी सर्दार को साथ ले अत्यन्त पैारुष व पराक्रम से शहर में घुसे और शेष सेना को स्थिर भाव से खड़े रहने को आज्ञा दे किले के बाहर ही रक्खा। यह तीनों घोड़े दैाड़ाते ताजियों की भीड़भाड़ में घुसते

अफगान सर्दार के महलतक चले गये। इतने में उस सर्दार ने नीचे आकर पूछा कि "तुम तीनों विदेशी सिपाही कहां जाते हो?" उसने पूछा ही था कि इतने में पृथ्वीराज ने उसके भाला मारा और ताराबाई के समीप खड़े हुए सर्दारने उसे उठाकर पृथ्वी पर दे मारा सर्दार के मारे जानेका समाचार मनुष्यों से प्रगट नहीं किया और शीघ्रता पूर्वक अपने २ घोड़ों को दौड़ाय बात की बात में किलेके फाटक पर जा पहुंचे। परन्तु द्वारपर पहुंचते ही उन्होने देखा कि एक मतवाला हाथी राह रोके हुए खड़ा है। ताराबाई ने यह देखते ही एक प्रचण्ड खड्ग घुमाय बल पूर्वक उस हाथी की सूंड पर मारा, सूंड कटकर नीचे आपड़ी और हाथी चिंघाड मारता हुआ मार्ग छोड़कर भागा। मार्ग खुलते ही वे तीनों अपनी सेना में जा मिले और उस सावधान खड़ी सेनाको एकसाथ ही आक्रमण करने की आज्ञा दी। सर्दार के मारे जाने से शत्रुओं का दिल टूट गया था

इस कारण कोई भी उनके सामने न ठहसका वरन अपने २ प्राण बचाय चारों ओर छिन्न भिन्न होकर भागगये। जो किसने एक भागते २ शहर में बच गये थे वे सभी राजपूतों की तीक्ष्ण तलवार से काटे गये। इस प्रकार पृथ्वीराज ने अपने श्वशुर को गया हुआ देश अफगानों के पंजों से छुड़ाया फिर उनको ही अर्पित किया। देश जीत लेने के उपरांत ताराबाई का बिवाह बड़ी धूमधाम से पृथ्वीराज के संग हुआ।

पृथ्वीराज ने इस प्रकार की बीरता कर शत्रु से देशको छुड़ाया। कारण वश बहनोई से पृथ्वीराज की लागडांट हो गई थी। सुअवसर पाय अपने अपमान के बदला लेने की इच्छा से मिठाई में बिष मिलाकर पृथ्वीराजके भोजन करनेको लाया इस प्रकार के कपट भाव को न जानकर आई हुई मिठाई को प्रीति पूर्वक खा गये। परन्तु वह हलाहल विष अत्यन्त ही तीक्ष्ण था, इस कारण थोड़े ही समय में रोम रोम में

व्याप्त हो गया, प्राण सूखने लगा, गले में काँटे पड़ने लगे जीभ खिंचने और पैर लड़खड़ाने लगे। अन्त में यह जानकर कि मैं अब विष के वश में होगया हूं प्राण न बचेंगे रानी ताराबाई को अपने महल में से बुलवाया और कहला भेजा कि "मेरे साथ छल किया गया है! प्राण का अन्तिम समय आगया, इस कारण शीघ्रता पूर्वक मुझ से आकर मिले।" रानी ताराबाई महल से नीचे उतरी, परन्तु समीप भी न आने पाई थी कि उनका प्राण देह छोड़कर निकल गया। रानी ने राजा के मृतक शरीर को गोद में ले सती होने को चन्दन की चिता सजवाय आप भी उसमें बैठकर स्वर्ग को पयान किया। इन दोनों वीरों के वीरत्व की प्रशंसा आजतक राजपूताने में प्रसिद्ध है, इतना नहीं वरन् वह इतिहासों में भी अजर अमर है।




( ४ )

सन् १५३३ ई० मे गुजरात के बादशाह बहादुर शाहने प्रचण्ड सेना को साथ लेकर चितौड़ पर आक्रमण किया। इस समय कायर और विषयी राणा विक्रमादित्य चितौड की गद्दी पर था इस लिये सब को चिन्ता हुई कि चितौड का उद्धार कैसे होगा! सिसौदिया कुलके गौरव की रक्षा कैसे होगी। किस रीति से राजपूत वीर स्वदेशकी रक्षा करसकेंगे ऐसी चिन्ताओं से सब लोग चिन्तित थे कि देवलिया प्रताप गढ़ के रावल अपनी राजधानी से आकर राणा के स्थान मे मरने मारने को तयार हुये उनकी आधीनता मे सब राजपूत वीरता के साथ युद्ध के लिये सन्नद्ध होगये मुसलमान सेना राजपूतों की अपेक्षा बहुत थी परन्तु फिर भी राजपूत विचलित न हुये।

सबने शपथ खाई कि या तो पूर्ण पराक्रम से लड़कर विजय प्राप्त करेंगे या युद्ध में प्राण देकर वीर गति प्राप्त करेगे। युद्ध के आरम्भ होते ही बहादुरशाह ने पहले अपनी तोपों से ही काम लिया परन्तु राजपूत तोपों की गर्जन सुनकर द्विगुण उत्साह से उत्साहित होकर जिधर से गोला आता था उधर बड़ी फुर्ती से अपने तीक्ष्ण बाण चलाने लगे उस समय तोपों से न तो बहुत दूरकी मारही होती थी और न बहुत जल्द २ चलती थीं। इस लिये तोपों के साथ २ बन्दूकें भी मुसलमान सेना को चलानी पड़ी बन्दूकों के धुएँ से रणस्थल मे अन्धकार हो गया दोनो पक्ष के बहुत सैनिक मारेगये परन्तु बहादुरशाह किसी रीति से चित्तौड़ पर अधिकार न कर सका।

अन्त में बहादुरशाह ने एक ओरके किले की दीवार बारूद की सुरङ्ग से उड़ाने का विचार किया और जो स्थल सुरङ्गसे उड़ाया गया वह हाडा वीर अर्जुनराय ने अपने ५००

योद्धाओं के साथ युद्धकर रहेथे इसलिये अपने समस्त सैनिकों के सहित मारे गये वैरियों ने इस समय भग्न दुर्गके भीतर घुसने के लिये धावा किया परन्तु चित्तौड़ अभी वीर शून्य न था। वीरश्वर राव दुर्गादास, उनके मुख्य सुभट सन्ताजी और दूदाजी तथा कितने एक सामन्त और सैनिक शत्रुओं के सामने अचल और अटल रूपसे डटे रहे।

देह में प्राण रहते कोई उनको हटा न सके। भीम विक्रम से वे मुसलमानो के धावे को हटाते रहे परन्तु थोड़े से राजपूत कबतक प्रचण्ड यवन सेनाका प्रतिरोध करसकते थे।

वीरत्व के साथ युद्ध करने रहने के पीछे जब वे मरते २ कम रह गये तो रणोन्मत्त मुसलमान अली अली कहते हुये किले में घुसने लगे। अकस्मात् फिर उनकी गति का अवरोध हुआ सबने चकित होकर देखा कि योद्धावेश में एक रमणी प्रचण्ड रण तुरङ्ग पर चढी हुई और हाथ में भाला लिये हुये खड़ी हुई है। यह वीर महिला राज माता जवाहर

बाई श्री जवाहर बाई ने जब हाडाओं के मारे जाने का समाचार सुना तो उसको विचार हुआ कि अब यदि कहीं राजपूत निराश और साहस हीन होगये तो चित्तौड का बचना कठिन है इस लिये कवच धारण कर और शस्त्र ले स्वयं वहां पहुंची जहाँ घमसान युद्ध होरहा था योद्धाओं को युद्ध के लिये उत्साहित करती हुई आप भी लडने लगी रानी की वीरता को देखकर राजपूतों ने ऐसा पराक्रम दिखलाया कि यवनों को पीछे हटना पड़ा।

यह वीर नारी सब राजपूतों के आगे रंधपथ रोके खड़ी थी जो यवन आगे को बढ़ता था वही इस के भाले से माराजाता था भाले के दारुण प्रहार से बहुत से यवन सैनिक मारेगये।

कई यवन वीर एक साथ आनेलगे परन्तु फिर भी वीर क्षत्राणी निरुत्साहित न हुई असीम साहस से रणोन्मत्त यवनों से युद्ध करती रही। दूसरे गजारूढ़ बहादुरशाह विस्मयापन्न होकर देख रहा था।

रमणी का अद्भुत रणकौशल देखकर वीरत्वाभिमानी यवन वीर आश्चर्य मे हुआ और महिषी जवाहरबाई जहां यवनदल की प्रबलता देखती वहीं तीव्र वेग से अपने घोड़े को लाकर युद्ध करने लगती थी जब कि राजपूतों और मुसलमानों में घोर युद्ध होरहा था धड़ से सिर अलग गिर २ कर लड़ रहे थे लोथों के ऊपर लोथें गिर रही थी उसी समय मे रानी के शरीर मे तोप का गोला आकर लगा और वह जगत् मे अपनी वीरता का अपूर्व दृष्टान्त और आत्मोत्सर्ग का ज्वलन्त उदाहरण छोड़कर स्वर्गलोक को सिधार गई। मेवाड़ की ऐसी २ शूरवीर और सती पतिव्रता रानियों के कारण मेवाड़ को और भी अधिक यश प्राप्त हुआ है।

हमारे देश की प्राचीन स्त्रियां ऐसी वीर और साहसिन होती थी अब तो रातको चूहों की खड़खड़ाहट सुनकर सहम जानेवाली स्त्रियां है।

# महाराणी दुर्गा

( ५ )

प्राचीन समय की स्त्रियों की वीरता धीरता सतीत्व का प्रभाव सुनकर एक बार हृदय में चपलासी चमक जाती है। महाराणी दुर्गा का साहस पढ़ सुन कर एक बार रोंगटे खड़े हो जाते है उन्हीं माताओं की पुत्रियाँ हम है जिन मे घोर मूर्खता छाई हुई है। प्यारी बहिनों आज मैं महाराणी दुर्गा की वीरता की कथा सुनाती हूं जिनको इस संसार से विदा हुए सैकड़ो वर्ष होगये पर इतिहास में अब तक देवी दुर्गा के साहस की कथा आदर पारही है।

यह महाराणी दुर्गा जयपुर नरेश की कन्या तथा बूंदी के राणाकी प्रिय धर्म-पत्नी थी दुर्गा अपने रूप और गुणके कारण बड़ी ही प्रसिद्ध हो रही थी चारों ओर इस के रूप गुण की प्रशंसा विख्यात होरही था। महा-

अपमान का बदला अवश्य लेंगे जो पवित्र बूंदी की स्त्रियां पर पुरुष का मुख देखना पाप समझती हैं उन्हीं बूंदी महारानी का इस दुष्ट ने अपमान किया है, माता मैं अब आपकी पुत्री नहीं किन्तु बूंदी की लाज हूं "यह कहकर अपनी सखी को कटार लाने की आज्ञा दी किसी का साहस न हुआ कि कटार लाकर दे यह देखकर क्रोध से कांपती हुई दुर्गा बोली "सखियों, तुम्हें कटार ला देना होगा मेरे हाथ मे जल्द कटार दो मैं अब इस बांये हाथ को अपने तन में न रहने दूंगी यह हाथ दुरात्मा का छुआ हुआ अपवित्र है यह अब बूंदी नरेश की सेवा के योग्य नहीं रहा अब मेरा यहां एक पल ठहरना हराम है जल्द बूंदी चलने का प्रबन्ध करो" सखी ने कटार लाकर कांपते हुए हाथ से रानी के हाथ में दिया किसी का साहस न पड़ा कि दुर्गा के साहस को रोकना बात की बात मे दुर्गा ने अपना बांया हाथ दाहिने हाथ से काट गिराया। घोड़ा सजाकर लाया

गया रानी के हाथ से रुधिर बह रहा था घोड़े पर कूदकर चढ़गई सब दास दासी साथ चले, रास्ते में बूंदी नरेश से भेंट हो गई रानी का यह हाल देखकर क्रोध की सीमा न रही अपने सहारे से नीचे उतारा उतरतेही रानी बेसुध होगई। दासियों से सारा हाल विदित हुआ वह दुर्गाको पालकी में लेटाकर सबके साथ बूंदी की ओर भेज दिया और आप नङ्गी तलवार ले जयपुर की ओर घोड़े को एड़ लगाई। उधर अमरसिंह नववधू के साथ खुशी में उदयपुर जारहा था मार्ग मे अजीतसिंह से भेंट होगई, अमर ने समझा कि इन्हें वह सब घटना तो अभी विदित नहीं हुई होगी यह सोचकर आदर के साथ भेंट करने को आगे बढ़ा पर अजीतसिंह की विकराल मूर्ति देखकर सहम गया राणा ने कड़क कर कहा "ओ बूंदी के अपमान करने वाले दुष्ट ! मैं तेरा शत्रु आपहुंचा ले सम्भल जा यह कह अमरसिंह के ऊपर भाला चलाया अमर सम्भल न सका और

भूमि पर गिरपड़ा अजीतसिंह अमर को मार कर बून्दी की ओर चलदिया अमरके साथियों में से किसी का साहस न हुआ कि अजीतसिंह को रोके। जब यह खबर जयपुर कुमारी अमर की नववधू के कानतक पहुंची तब पालकी से उतरकर उसी स्थान पर आई जहां उसके पति देखथे नववधू ने चिता बनाने की आज्ञादी और पति को गोद में लेकर शान्त भाव से बैठकर मुखावलोकन करने लगी और पति को हृदय से लगाकर चुम्बन किया और बोली "प्राणनाथ मैं क्या किसी से कम सुन्दरी थी कि आप पर स्त्री पर मन चलाते! यह मेरे भाग्य का दोष था कि आपका दर्शन पहिले पहिल मुझे मृत्यु शैय्या मे हुआ नाथ! मुझे शोक है तो इसी का आपसे दो २ बातें भी न होने पाई" इतने में चिता तैयार होगई सती दुर्गा की बहन पति को गोद मे लिए जलकर राख होगई। धन्य सती धन्य दुर्गा का साहस और सती का सतीत्व सराहनीय है।

# पृथ्वीराजकी रानी

( ६ )

मुसलमान बादशाहों के अत्याचारों को सुनकर हृदय कम्पायमान होता है परन्तु उस समय की स्त्रिया भी ऐसी पतिव्रता और वीर थीं कि जिनके चरित्रों को सुनकर हमारा हृदय प्रफुल्लित हो जाता है । अकबर बादशाह ने स्त्रियोंके लिये एक मीना बाजार स्थापित किया था जिसमे स्त्रियां देखने आया करती थीं । एक दिन पृथ्वीराज* की रानी देखने आई अकबर ने एक दूती को भेजकर रानी को बहाने से भुलावा देकर अपने पास बुलाना चाहा, बडे २ दांव पेच और बहानों से वह दूती रानी को महल मे ले आई ।

अकबर रानीको देखकर कहने लगा प्यारी !

---

*पृथ्वीराज महाराज बीकानेर के भाई ।

इधर आओ मेरे पास बैठो आराम करो, रानी अकबर को देखकर अवाक रहगई कि यहां कहां आगई मालूम होता है उस बुढ़िया ने बड़ा धोखा दिया, अकबर ने रानी को चिन्ता में देखकर कहा, क्या सोचती हो? देखो मैं इस समय इतना बड़ा प्रतापी बादशाह हूं जिसको निगाह की ओर को दुनियां भरके बादशाह देखते रहते हैं। वही आज तुम्हारा ताबेदार बनने को तैयार बैठा है।

अकबर की बात सुनकर, रानी क्रोधित हो बोली, देख अकबर तू बहुत बड़े सिंहासन पर बैठा है, ऐसे दुष्ट कर्मों से इस राज्य सिंहासन को कलुषित न कर और मुझे अभी मेरे घर पहुंचा दे। अकबर ने उठकर रानी का हाथ पकड़ना चाहा, रानी हाथ झटक कर बोली, रे दुष्ट क्या तूने मुझे इस महल में अकेला समझा है मै तुझे बतलाये देती हूं कि तू अभी अपने जीवन से हाथ धो बैठेगा! अकबर हाथ जोड़कर नहीं नहीं देखो यह

नौलखा हार यह अमूल्य चम्पाकली यह रत्नजड़ित गहने यह सच्चे मोतियो का सतलड़ा हार सब तुम्हारी नजर है और सदा के लिये मै तुम्हारा तावेदार बनूंगा।

रानी क्रोध से कांपने लगी लाल २ आंखें निकालकर बोली—क्यों रे अधर्मी! नर-पिशाच! तूने मेरी बात न मानी! क्या तू अभी अपने काल को बुलाना चाहता है?

क्या तू वीरा वीराङ्गनाओं को लालच से वश मे किया चाहता है! मानो स्यार होकर सिंह का सामना करना चाहता है, सूर्य की प्रभा को कोई नही छू सकता, जैसे कोई निर्धन मनुष्य अपने घर में सोने का वृक्ष लगाना चाहता है, मानो तू मन्दराचल पवत को हाथो से उखाड़ना चाहता है।

रे दुष्ट! क्या तू सुई से अपने नेत्र खुज-वाया चाहता है, क्या जीभ से छुरे की धार चाटना चाहता है, क्या सूर्यको हाथसे पकड़ना चाहता है, या प्रज्वलित अग्नि को वस्त्र में बांधकर लेजाना चाहता है, क्या लोहे के

त्रिशूल पर चलना चाहता है, देख अकबर! जितना अन्तर सिंह और शृगाल मे है छोटा नदी और समुद्र मे है हाथी और बिलार में है गरुड़ और काक में है उतना ही मुझ में और तुझमे है। मै तेरी दुष्टता सब सुन चुकी हूं। आज तुझे इस दुष्ट कर्म्म करने से सचेत करने आई हूं अब भी तू अपने घृणित कर्म्मों को छोड़, अकबर हँसकर! जरा बैठो तो सही, रानी और भी क्रोध में आकर निर्लज्ज भाव से बोली-क्योंरे अधर्मी! क्या तेरा काल ही तेरे सिर नाच रहा है? क्या आज मुझी को नरपति हत्यासे अपना हाथ अपवित्र करना होगा?

देख अकबर! तू मेरे सामने से हटजा आज मै तेरे हाथ से निर्दोष राजपूत बालाओं के सतीत्व रक्षार्थ घर से कटिबद्ध होकर आई हूं तुझ से फिर भी यही कहती हूं कि अपनी इस नीचता की इच्छा को छोड़ और अपने कर्त्तव्य की ओर देख! अकबर ने रानी का हाथ पकड़ना चाहा, रानी ने

झपटकर अकबर को धरतीपर पटक दिया अपनी कमरसे छिपाये हुए कटारको निकाल अकबर की छाती पर बैठ क्रोध से हांपती हुई बोली।

हे नराधम! जो तू नही मानता है तो मै भी आज तुझे यमपुर पहुंचाये देती हूं और तेरे बोझसे पृथ्वीको हलको कर तुझे इस नीचता का आनन्द दिखाती हूं। कटार को अकबर की छाती पर रखकर कहने लगी—देख अकबर! मैंने तुझे बहुत समझाया, परन्तु तू ने मेरी बात न मानी। राजा को सब प्रजा अपनी सन्तान की समान पालनी चाहिये और सब को धर्म दृष्टि से देखना ही राजा का धर्म्म है, तू नहीं जानता कि भारतवर्ष की वीर बालायें धर्म्म के लिये प्राण और धन को कुछ नहीं समझतीं।

जहा धर्म्म जानेकी बात आजाती है लाखों के धन पर लात मार देती है और प्राणो को हथेली पर रखकर संसार के सब सुखो को तिलाञ्जलि देकर एक धर्म्मको ही रक्षा करती

हैं। दूसरे जन्म मे माता पिता फिर से मिल जाते हैं भाई बहिन मिल जाते हैं कुटुम्ब परिवार और साँसारिक सब सुख मिलते हैं परन्तु धर्म्म फिर से नहीं मिलता अर्थात् जिसने अपने धर्म्म की रक्षा नहीं की वह कई जन्मो तक नरक प्राप्त करतो है क्योंकि मनुष्य जन्म फिर फिर से मिलना बड़ा कठिन है।

रानी ने ज्योंहीं कटार अकबर के गले पर रखना चाहा अकबर आर्त्तस्वर से हाथ जोड़ कर कहने लगा, जरा मेरो बात सुनो, मुझे न मारना मेरी एक बात सुनो मेरा अपराध क्षमा करो! रानो-कह क्या कहता है?

अकबर! मै अपने किये हुए अपराध पर लज्जित होता हूं और आपसे अपराध की क्षमा मांगता हूं। मुझे जीवदान दीजिये मैं ईश्वर की सपथ (कसम) खाकर और उसे साक्षी देकर कहता हूं कि अब कभी भूल कर भी ऐसा अपराध मुझ से न होगा, मुझे बड़ा भारी धोखा हुआ मेरी इस तरुण

अवस्था ने मुझे भूल में डाला मैं अब तक यह नहीं जानता था कि भारत वर्ष में ऐसी पतिव्रता, वीरा धर्म्म की रक्षा करने वाली स्त्रियां उपस्थित (मौजूद) है, मैं इस बात को स्वप्न में भी न सोच सका था कि धर्म्म पर चलने वाली स्त्रियों के लिये यदि संसार की सम्पूर्ण सम्पत्ति मिलती हो तो भी वे उसे अपने धर्म्म के सामने मिट्टी की समान समझती हैं, वास्तव मे धर्म्म ऐसी ही अमूल्य वस्तु है। मैं समझता था कि किसी सुन्दरी को धनके लालच से अपने आधीन कर लेना कुछ कठिन नहीं है परन्तु आज यह अभिमान जाता रहा और ऐसी उत्तम शिक्षा मिली कि मैं जीवन पर्यंत न भूलूंगा और आपको बड़ा कृतज्ञ (एहसानमन्द) हूंगा।

रानी ! मुझे तेरी बात का विश्वास कैसे हो ? हाय ! जिन राजपूत वीरों की सहा-यता से आज तुझे यह प्रताप प्राप्त हुआ है, हे कुलांगार ! उन्ही की बहू बेटियों पर हाथ डालते तुझे लज्जा नहीं आती धिक्कार है !

अकबर—आप मुझे जितना धिक्कार दें थोड़ा है परन्तु स्मरण रक्खें कि यदि मैं हुमायूं के वीर्य्य से उत्पन्न हुआ हूं और ईश्वर की सपथ खाकर प्रतिज्ञा करता हूं तो मुझसे ऐसा अपराध अब कभी न होगा।

रानी—देख अकबर! तू बड़ा बादशाह है मेरे स्वामी ने तेरा नमक खाया है इसलिये तुझे आज छोड़े देती हूं परन्तु स्मरण रख यदि मैं अब कभी तेरी ऐसी दुष्टता सुन पाऊंगी तो तेरा सब भेद समस्त राजपूताने में खोलदूंगी और एक दिन राजपूत मात्र को तेरा शत्रु बना दूंगी। तेरी इस दुष्टता और अधर्म्म पर मुझे क्रोध आता है रे मदान्ध! तूने बादशाहत के अभिमान में आकर धन के घमंड में उन्मत्त होकर पतिव्रताओं का धर्म नष्ट करने का विचार किया है परन्तु देख जिस प्रकार काले सांप के सामने दीपक का प्रकाश लोप हो जाता है उसी प्रकार धर्ममार्ग पर चलने वाली अबलाओं के सन्मुख बड़े वीर और साहसी अधर्म्मी जनों के शस्त्र हाथ से गिर जाते हैं। इस प्रकार अकबरको नीचा दिखाकर रानी अपने गृहको चली गई।

# लीलावती

( ७ )

ली लावती चिरजीव शर्मा महाचार्य की कन्या थी इसका विवाह धीरेन्द्रनाथ के साथ हुआ था। नदिया से ३० कोस हरीपुर गाम में चिरंजीव शर्मा के दो कन्याएं थीं, बडी का नाम लीलावती और छोटी का नाम मालती था लीलावती बड़े धनाढ्य के घर व्याही गई थी, धीरेन्द्रनाथ अपने धनाढ्य पिता का इकलौता पुत्र था इसकी माता बाल्यावस्था में ही अपने प्यारे पुत्र को छोड़ स्वर्ग को सिधार गई, कुछ दिन में धीरेन्द्रनाथ का पिता भी इस असार संसार से सदैव के लिये कूच कर गया।

माता के न रहने पर लीला का पति कुसंगति में पड़ पिता का बड़े परिश्रम से

इकट्ठा किया हुआ धन उड़ाने लगा, जैसा कि बहुधा धनवानों के पुत्र जो लाड़ प्यार के कारण उत्तम प्रकार से शिक्षा नहीं पाते और माता पिता के मर जाने पर कुसंगति में पड़कर दुःख भोगते हैं इसी प्रकार लीला का पति भी बुरों के संग मे पड दुष्ट कर्म करने लगा। उसे रात दिन इधर उधर फिरने हंसी ठट्ठा के और कुछ काम न था।

कुमार्गी जन ही उसके मित्र परम मित्र सलाहकार बन गये, और उसने अपना सारा धन ठिकाने लगा दिया। लीलावती बड़ी सुशीला पतिव्रता धार्मिका और सरल स्वभाव की स्त्री थी बहुत समझाने पर भी पति ने उसका कहना नहीं माना। एक दिन उसके पति ने उसे घर से निकाल दिया। लीला को इस दशा मे भी पति का साथ छोड़ना अच्छा नहीं लगा। वह पति के चर्णों पर शिर रखकर रोने लगी और अपना अपराध क्षमा करने की प्रार्थना करने लगी, यद्यपि लीला का कोई अपराध नहीं था।

बहुत रोने और प्रार्थना करने पर भी उस कठोर हृदय पति ने नहीं मानी और लीला को अपने घर से निकाल दिया लीला लाचार होकर अपने पिता के यहां चली गई पिता ने बड़े स्नेह से लीला को रक्खा पति के यहां से दु:खी निकाली हुई समझकर लीला का पिता बड़े प्रेम से उसे रखता कि जिससे लीला के चित्त मे कुछ दु:ख न हो। यद्यपि लीला को पिता के यहां कुछ भी दुःख नहीं था परन्तु सती पतिप्राणा स्त्रियों को पति से अलग रह कर संसार का कोई सुख सुखी नहीं कर सकता।

प्यारी बहिनो! आप जानती ही हैं पति-प्राणा पतिव्रता स्त्रियां मोहन भोग में भी वह आनन्द नहीं पाती जो पतिके पास सूखी रोटियो मे उन्हे मिलता है।

रेशमी वस्त्रो में वे अपने शरीर की शोभा नहीं समझती किन्तु पति के पास रहकर एक फटी पुरानी और मैली धोती में ही इन्द्र की अप्सराओं की समान अपने

को शोभायमान समझती हैं मखमली गद्दे और जड़ाऊ पलंग पर उन्हें निद्रा नही आती किन्तु पति के यहां वे पृथ्वी पर पड़ रहना ही इन्द्र के इन्द्रासन का सुख समझती हैं।

यही दशा पिता के घर लीला की हो गई किसी ने बहुत कहा तो उसे प्रसन्न करने के लिये कुछ खाकर पेट भर लिया करती। रात में एक क्षण को भी उसे निद्रा नहीं आती, पागल की भाँति रात दिन कहीं इधर कहीं उधर घर मे बैठा करती किसी के पास बैठना भी उसे बुरा लगता है। इसी प्रकार बहुत दिन व्यतीत हो गये परन्तु लीला के पति ने उसकी कुछ भी खबर नहीं ली।

इधर लीला का पति खराब संगति मे अपना सारा धन फूक कर भूखों मरने लगा, एक दिन उसे डाकू पकड़ ले गये। धीरेन्द्र ने कहा मै भूखों मरता हूं मेरे पास क्या धरा है मुझे छोड़ दो तब डाकुओ ने कहा तू अपनी स्त्री हमे देदे उसमें से एक दो डाकू ने लीला की सुन्दरता की प्रशंसा सुन रक्खी

री। सब डाकुओं ने कहा यदि तू अपनी जान बचाना चाहता है तो अपनी स्त्री को हमें देदे।

धीरेन्द्र को यह विश्वास था कि लीला प्राण भले ही देदे परन्तु इनके पास रहना स्वीकार कदापि न करैगी, उसने डाकुओं से कहा लीला पतिव्रता साध्वी स्त्री है वह कदापि इस बात को स्वीकार न करैगी। डाकुओं ने कहा तो हम लोग भी तुम्हे जिन्दा नही छोडैगे इस प्रकार धीरेन्द्र को डाकुओं ने अपने झुंड में कैद करके रक्खा अब धीरेन्द्र को बड़ा दुःख हुआ वह लीला की याद करके रोने लगा और पश्चाताप करने लगा कि यदि मैं अपनी स्त्री का कहना मानता तो मेरी आज क्यो ऐसी दशा होती।

मैंने उसे बहुत दुःख दिया है कदाचित उसी के श्राप से मेरी यह दशा हुई है यदि परमात्मा मेरी जान बचावै तो अब मैं उसे बुलाकर प्रसन्न रक्खूंगा। इस प्रकार धीरेन्द्र अपने मनमे लीला की प्रशंसा करने लगा। एक दिन एक बुढ़िया भिखारिन भीख मांगते मांगते उन्हीं डाकुओं

इस प्रकार बिलाप करती हुई, लीला अपने पति की खोज में फिरने लगी। उधर डाकुओं ने अपने दो मनुष्य विमला और रामदास लीला को पकड़ कर लाने के लिये भेजे दोनों भेष बदल कर लीला के पिता के यहां जाकर नौकरी के बहाने रहने लगे जब उन्हें पता लगा कि लीला अपने पति की खोज मे योगिनि होकर निकली है लीला का पातिव्रत धर्म और साहस देखकर वे दोनों अपना सब कर्त्तव्य भूल गये और लीला की सेवा मे रहने लगे।

पातिव्रत धर्म्म के तेज के आगे वे दोनों साहसहीन हो गये, और उन्होंने डाकुओं का साथ छोड़ दिया। लीलाने बड़े बड़े कष्ट उठाकर अपने पतिको पाया। फिर उसका पति उसकी सलाह से चलने लगा और वे दोनों आनन्दपूर्वक रहने लगे। धन्य है लीला तेरा पतिप्रेम और धार्मिक साहस! तेरे ही समान हमारे देशकी सभी स्त्रियां ज्ञानवती और पतिभक्ता हों।

# सुलोचना

( ८ )

सुलोचना रावण के वीर पुत्र मेघनाथ से बिवाही हुई थी यह शान्त स्वभाव दयालु और पतिव्रता थी। सास की सेवा इस प्रकार करती थी, मानों उसकी पुत्री थी उस समय पतिव्रता धर्म मे आपही अपना दृष्टान्त थी जिस समय रावण महारानी सीता जी को हरकर ले आया सुलोचना ने बहुत शोक किया इसने अपने पति इन्द्रजीत मेघनाथ से कहा। आप के पिता ने बड़ा उपद्रव किया है। श्रीरामचन्द्र जी की स्त्री महारानी सीता जी पतिव्रता हैं और उत्तम बर्ताव और सौन्दर्य में अपने समान दूसरा नहीं रखती हैं पति के पास न होने से पर स्त्री को इस प्रकार हर ले आना बड़ा पाप है यद्यपि मुझे बड़ों की निन्दा

इस प्रकार विलाप करती हुई, लीला अपने पति की खोज में फिरने लगी। उधर डाकुओं ने अपने दो मनुष्य विमला और रामदास लीला को पकड़ कर लाने के लिये भेजे दोनों भेष बदल कर लीला के पिता के यहां जाकर नौकरी के बहाने रहने लगे जब उन्हें पता लगा कि लीला अपने पति की खोज में योगिनि होकर निकली है लीला का पातिव्रत धर्म और साहस देखकर वे दोनों अपना सब कर्त्तव्य भूल गये और लीला की सेवा में रहने लगे।

पातिव्रत धर्म्म के तेज के आगे वे दोनों साहसहीन हो गये, और उन्होंने डाकुओं का साथ छोड़ दिया। लीलाने बड़े बड़े कष्ट उठाकर अपने पतिको पाया फिर उसका पति उसकी सलाह से चलने लगा और वे दोनो आनन्दपूर्वक रहने लगे। धन्य है लीला तेरा पतिप्रेम और धार्मिक साहस। तेरे ही समान हमारे देशकी सभी स्त्रियां ज्ञानवती और पतिभक्ता हों।

इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा यदि चुप रहता हूं तो भी नहीं बनता मन्त्री दीवान सब समझा चुके मेरी माताने भी बहुत समझाया पर सब का कहना व्यर्थ हो गया मै उसका पुत्र हूं नीति चाहती है कि पिता और राजा को भूल में भी सहायता दीजावे इस लिये मैं ईश्वर इच्छानुसार जान बूझकर उसके हट के अनुसार काम कर रहा हूं।

यह शरीर अभी जाय चाहे रहे परन्तु नीति के विरुद्ध मुझ से काम न होगा सुख दुख मित्र शत्रु अपने कर्मके फल है तू कुछ चिन्ता न कर जो होने वाला है वह होकर रहैगा इस पर किसी का वश नही चलता। पुरुष को ईश्वरेच्छा पर प्रसन्न रहना चाहिये रावणकी इस भूलका परिणाम लड़ाई हुई भगवान रामचन्द्र जी ने समुद्र पर पुल बांध कर लंका मे पयान किया और वानर व रीछों की सेना ने रण मे वह कर्त्तव्य दिखाए कि राक्षसोंके छक्के छुड़ा दिये रावण के कई पुत्र मारे गये जब कुम्भकरण भी

करना उचित नहीं परन्तु मुझे जान पड़ता है कि इस देश व इस वंश का नाश होगा क्योंकि वृद्धों का वचन है। पर स्त्री की इच्छा से कुल का नाश हो जाता है।

लोक परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं जो साधुओं से लड़ाई करे गुरू की आज्ञा को न माने जीवों की हिंसा करे, ईश्वर की निन्दा में प्रसन्न हो सत् ग्रन्थों का त्याग करे और दूसरे की बहू बेटी को बुरी दृष्टि से देखे वह इस संसार मे मनुष्य के आकार का पशु है पृथ्वी उसका भार नहीं सहार सकती! प्राणपति! क्या लंका में बुद्धिमान मन्त्री नहीं रहा है जो रावण को समझा कर धर्म मार्ग पर चलावे।

मेघनाथ ने अपनी स्त्री की बात सुनकर कहा कि तू सच कहती है तेरी बात सत्य है मैं अच्छा तरह से समझता हूं परन्तु क्या करू पिता पुत्र का सम्बन्ध बिलक्षण है पर यही नहीं मै रावण की प्रजा भी हूं यदि उसकी आज्ञा न मानू तो राजा के और लोगों पर

आँखें खोलदीं और अपने पति की कृपाओं और उसकी वीरता को स्मरण करके रोने लगी प्राणनाथ तुमने कैसे शीघ्र प्राण त्याग किया तुम्हारी तो संसार में कोई बराबरी नही कर सकता था तुमने सहस्रों राजाओं को नीचे किया था तुम कहते थे मुझे मारने वाला ससार में कोई नहीं मुझको वह पुरुष मार सकेगा जिसने अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया हो रामचन्द्रजी की सेना में तो कोई ब्रह्मचारी नहीं है वहां तो सब विवाहित मनुष्य हैं, पति क्या तुम्हारी बात मिथ्या थी सामने से एक आकाश वाणी हुई इन्द्रजीत को लक्ष्मण सुमित्रा के पुत्रने मारा है वह धर्मात्मा पुरुष जिसने विवाह होने पर भी कभी स्त्री का मुख नहीं देखा निद्रा क्षुधा तृष्णा उसके वश मे है जिसका मन व वाणी सच्चाई पर आसक्त है यह सच्चा इंद्रियों को जीतने वाला इन्द्रजीत को मारने का कारण हुआ यह सुनकर सुलोचना फिर रोने लगी सारे महल मे कोलाहल

मारा गया तो मेघनाथ इन्द्रजीत की बारी आई यह बड़ा छलिया और वीर था इधर उधर के वीर योधा इसका नाम सुनकर कांप उठते थे आते ही इस ने कई बेर अयोध्या पति की सेना को पीछे हटा दिया निदान वीर लक्ष्मण के तीर ने इसके सिर को धड़ से अलग कर दिया यह लंका का दीपक था रावण जानता था कि रामचद्रजी की सेना में इस के बाहुबल के समान बल-वान एक भी पुरुष नहीं है। परन्तु लक्ष्मण ब्रह्मचारी ने इनको मिट्टी मे मिला दिया।

सुलोचना अपने रग महल में अपनी सखियों के साथ बात चीत कर रही थी उस को भी निजपति के बाहुबल पर पूरा विश्वास था और कहती थी कि आज मेघनाथ अपने पौरुष के गुण को दिखा रहा होगा इतने मे खबर आई कि वह मारा गया सुलोचना उसी समय हिंडोले से पृथ्वी पर गिर पड़ी और बेसुध हो गई सखियों ने मुखपर जल छिड़क पंखा किया इसने

इसने रावण की ओर से मुख फेर लिया और मन्दोदरी की ओर देखने लगी मन्दोदरी उसके अभिप्राय को समझ गई उसने बहू से कहा प्यारी पुत्री मैं क्या करूं।

तू आप श्रीरामचन्द्र जी के पास जा और उनसे अपने पति का सिर मांगला वह सज्जन सुभाषी स्वोव्रत और नीतज्ञ हैं तेरा कभी अपमान नहीं करेंगे इसके सिवाय विभीषण तेरा ससुर वहां है, यह सम्मति सुनकर रावण दंग होगया और सुलोचना उस को सिर झुकाकर रामचन्द्र के शिविर (तम्बू) की ओर चली मेघनाथ के मारे जाने के अनन्तर दोनो ओर की सेनायें अपने २ स्थानों में जाचुकी थीं केवल एक ही आधा घंटा व्यतीत हुआ था कि सुलोचना निर्भयता से रामचन्द्रजी के पास गई गुप्तचरों ने पहिले से ही खबर दे रक्खी थी जब वह सन्मुख आकर प्रणाम करने के अनन्तर रोने लगी तो रामचन्द्रजी ने कहा पुत्री! तू क्या चाहती है जिस बात की

मच गया पशु पक्षी नेत्रों से अश्रु पात करने लगे और महल शून्य दिखाई देने लगा अंत में सहेलियों ने, ये संसार असार है कहकर उसको तसल्ली दी और सुलोचना धैर्य धारण कर उठी और सखियों को साथ लेकर रावण की सभा में गई मंदोदरी उसकी सास भी साथ थी सुलोचनाने ससुर का पांव छूकर कहा महाराज आज ईश्वर ने मेरा सौभाग्य छीन लिया मेरा प्राणपति संसार से चला गया आज्ञा हो तो मै भी परलोक गमन की तैय्यारी करूं।

विलाप करती हुई वधू को देखकर रावण के सिर पर शोक का पहाड़ टूट पड़ा वह शोक से कहने लगा बहू! तू शोक मत कर अभी तेरे पति का बदला लेता हूं परन्तु सुलोचना भलीभांति जानती थी कि यह वचन उसके लिये कहां तक शान्ति दायक थे वह पहिलेही से जानती थी कि महारानी सीता की आह ने लङ्का के नाश की सामग्री एकत्र करदी है और रावण की मृत्यु आगई है।

रख दिया फिर चिता तैय्यार की गई और वह सती पति के सिर को गोद में लेकर उस मे जा बैठी आग भड़कने लगी यह धीरा स्त्री धीरता से बैठी रही सबसे पहिले कपड़ों में आग लगी फिर उसके केश जलने लगे हाथ पांव से लपटें निकलने लगीं और उसी तरह बैठी रही और सबके देखते २ पति के शरीर के साथ जलकर भस्म हो गई।

प्यारी पाठिकाओ! प्राचीन समय में राक्षसों की स्त्रियों में भी पातिव्रत धर्म का इतना प्रभाव था जिनकी जीवन कथाएं उसी धर्म के प्रभाव से अब तक मिल रही हैं वे सती स्त्रियां मरीं नहीं किन्तु अब तक जीवित हैं जिसका नाम संसार में अमर है वही जीवित है।

---

## जरूरी बात।

भारत का नारी इतिहास कई भागों में पूरा होगा इस सम्पूर्ण पुस्तक में ५०० पांच सौ स्त्रियों के जीवन चरित्र रहेंगे।

आवश्यकता हो मेरे से कहो, उसने कहा महाराज मैं अपने पति का सिर चाहती हूं कि उसको गोद मे लेकर मै भी संसार मे प्रस्थान करूं रामचन्द्रजी ने कहा पुत्री तू धन्य है तू स्त्रियों मे शिरोमणि है तेरे पतिव्रता धर्म की कथा सर्वदा लोग खुशी से सुना करेंगे और उनकी आज्ञा पाते ही सुग्रीव दौड़ा और ढूंढकर सिर उठा लाया पति का सिर देखते ही सुलोचना मुक्त कंठ से रोने लगी प्राणनाथ यह तुम्हारी क्या दशा है अभागी सुलोचना को यह भी देखना था। यह कहना था कि मेघनाथ के सिर में चेष्टा उत्पन्न हुई उसने नेत्र खोले और खिलखिला कर हँस पड़ा। लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ जिन्होंने सुलोचना की दीनताकी ओर दृष्टि की सबके नेत्रों मे से अश्रु धारा बह निकली उस समय रामचन्द्रजी ने सुलोचना को कुछ उपदेश किया सुलोचना सिरको गोद में लेकर समुद्र के किनारे गई मेघनाथ का धड़ यहां था सिर को धड़ से मिलाकर

जीवन में आत्मोत्सर्ग, स्वार्थपरित्याग और परोपकार के निमित्त जीवन का बलिदान करने का साहस नहीं वह संस्था एकमात्र शुष्क और नीरस है। उसके फलों और फूलों में मनुष्यों को आकर्षण करने की शक्ति नहीं प्रत्येक धार्मिक सस्था के इतिहास मे आत्म समर्पण के उदाहरण मिलते है और किसी संस्था की उन्नति और उपयोगिता का मूल्य भी उन्हीं आत्माओं के चरित्रों द्वारा देखा जाता है जिन्होंने उस संस्था को उपयोगी समझ कर स्वीकार किया है बौद्ध धर्म का इतिहास ऐसे निर्मोह नर नारियो के जीवनों से परिपूरित है।

उन महात्माओं मे मगधराज महाराज की कन्या सद्धमित्रा का प्रातःस्मरणीय जीवन प्रातः काल के उज्वल तारे के समान इतिहास के पृष्ठों पर चमक रहा है। इस धर्मपरायणा, कोमल हृदया, परदुखकातरा, मधुरभाषिणी भिक्षुणी ने अनेक वज्रादपि कठोर आत्माओं को धर्म पथ पर आरूढ़ करदिया।




( ९ )

धर्म के प्रचार एवं अज्ञानग्रस्त नरनारी वृन्दके कल्याण के लिये इस पुण्य भूमिमे अनेक आत्माओं ने अमूल्य जीवनों का बलिदान किया है। उन्होंने पार्थिव विलास तथा सांसारिक ऐश्वर्य्य को जलाञ्जली दी और केवलमात्र धर्मोन्नति तथा परहितार्थ अपने जीवन का उत्सर्ग किया। धर्म के उच्च और पवित्र भाव ही मनुष्य को परोपकार के पथ पर चलाने और स्वार्थ की आहुती से धार्मिकाग्नि को देदोप्यमान करने का अवसर प्रदान करते हैं। एक जीवित प्राणी की आहुती अनेक आत्माओं को धर्म के रस को आस्वादन करने के निमित्त प्रेरित करती है। जिस संस्था के संचालकों के

जीवन में आत्मोत्सर्ग, स्वार्थपरित्याग और परोपकार के निमित्त जीवन का बलिदान करने का साहस नहीं वह संस्था एकमात्र शुष्क और नीरस है। उसके फलों और फूलों में मनुष्यों को आकर्षण करनेकी शक्ति नहीं प्रत्येकधार्मिक संस्था के इतिहास मे आत्म समर्पण के उदाहरण मिलते हैं और किसी संस्था की उन्नति और उपयोगिता का मूल्य भी उन्ही आत्माओं के चरित्रों द्वारा देखा जाता है जिन्होंने उस संस्था को उपयोगी समझ कर स्वीकार किया है बौद्ध धर्म का इतिहास ऐसे निष्प्रीह नर नारियों के जीवनों से परिपूरित है।

उन महात्माओं मे मगधराज महाराज की कन्या सङ्घमित्रा का प्रातःस्मरणीय जीवन प्रातः काल के उज्ज्वल तारे के समान इतिहास के पृष्ठों पर चमक रहा है। इस धर्मपरायणा, कोमल हृदया, परदुखकातरा, मधुरभाषिणी भिक्षुणी ने अनेक वज्रादपि कठोर आत्माओं को धर्म पथ पर आरूढ़ करदिया।

मगधाधिपति महाराज अशोक अपने पिता विन्दसार के समय में अवन्ति प्रदेश में शासन करता था। उज्जयिनी नगरी की "देवी" नाम्नी परम रूपवती राजकुमारी से अशोक ने विवाह किया। इनके यहाँ राजकुमार महिन्द (महेन्द्र) और राजकुमारी 'सङ्घमित्रा' इन दो बालकों ने जन्म धारण किया। इस समय महाराज अशोक स्वयम् दीक्षा ले चुके थे। उनके जीवन में क्रमशः बुद्धधर्म की शिक्षा अपना स्थान कर चुकी थी। सोते, उठते, बैठते, जागते उन्हें बौद्ध धर्म के प्रचार की लगन थी। उन्होंने क्रमशः मांस भक्षण का परित्याग कर दिया था। परित्याग ही नहीं बरन् प्रजा में भी इस निन्दनीय प्रणाली के बन्द करने के अनेक उपाय सोचे थे। उन्हें धर्म्म में इतनी अगाध श्रद्धा होगई थी कि उन्होंने राजकुमारी का नाम भी सङ्घमित्रा ही रखना पसन्द किया।

सिंघलेश्वर (लङ्कापति) पाण्डुकवाहू का पौत्र 'तिस्स" इन दिनों लंका में राज्य

करता था। जब महाराज अशोक ने मगध-देश पर अपना शासन आरम्भ किया, तब सिंहलेश महाराज तिस्स ने बहुमूल्यथाल तथा उत्कृष्ट मोती और अनेक अन्य पदार्थ मगधाधिपति की सेवा में समर्पण किये थे। जो चार दूत इनकी भेट के पदार्थों को लाये थे, मगध में उनका बड़ा सत्कार किया गया और बड़े आदर तथा सम्मान से उन्हें विदा किया गया था। इधर महाराज अशोक ने अपने राजकर्मचारियों द्वारा महानुभाव तिस्स की प्रसन्नता के लिये उपहार के स्वरूप में बहुमूल्य कुछ सामग्री भेजी। उनमें एक अति सुन्दर मणिमय किरीट और मणिमुक्ता विमण्डित तलवारादि वस्तुएं थीं। इन वस्तुओं के साथ एक प्रेमपत्र भी भेजा जिसमें उपदेश था कि "बुद्धदेव और उनके कथित धर्म को ग्रहण करने से अवश्यमेव आपका और आपकी प्रजा का कल्याण होगा"। दूतों के प्रस्थान करने पर महाराज अशोक ने सिंहलदेशमें धर्मके प्रचार करने के उपायों

मगधाधिपति महाराज अशोक अपने पिता विन्दसार के समय में अवन्ति प्रदेश मे शासन करता था। उज्जयिनी नगरी की "देवी" नाम्नी परम रूपवती राजकुमारी से अशोक ने बिवाह किया। इनके यहाँ राजकुमार महिन्द (महेन्द्र) और राजकुमारी 'सङ्घमित्रा' इन दो बालकों ने जन्म धारण किया। इस समय महाराज अशोक स्वयम् दीक्षा ले चुके थे। उनके जीवन मे क्रमशः बुद्धधर्म की शिक्षा अपना स्थान कर चुकी थी। सोते, उठते, बैठते, जागते उन्हें बौद्ध धर्म के प्रचार की लगन थी। उन्होंने क्रमशः मांस भक्षण का परित्याग करदिया था। परित्याग ही नहीं वरन् प्रजा में भी इस निन्दनीय प्रणाली के बन्द करने के अनेक उपाय सोचे थे। उन्हें धर्म्म में इतनी अगाध श्रद्धा होगई थी कि उन्होंने राजकुमारी का नाम भी सङ्घमित्रा ही रखना पसन्द किया।

सिंघलेश्वर (लङ्कापति) पाण्डुकचाहू का पौत्र 'तिस्स' इन दिनों लंका मे राज्य

करता था। जब महाराज अशोक ने मगध-देश पर अपना शासन आरम्भ किया, तब सिंहलेश महाराज तिस्स ने बहुमूल्यवान तथा उत्कृष्ट मोती और अनेक अन्य पदार्थ मगधाधिपति की सेवा मे समर्पण किये थे। जो चार दूत इनकी भेट के पदार्थों को लाये थे, मगध मे उनका बड़ा सत्कार किया गया और बड़े आदर तथा सम्मान से उन्हें बिदा किया गया था। इधर महाराज अशोक ने अपने राजकर्मचारियों द्वारा महानुभाव तिस्स को प्रसन्नता के लिये उपहार के स्वरूप मे बहुमूल्य कुछ सामग्री भेजी। उनमें एक अति सुन्दर मणिमय किरीट और मणिमुक्ता विमण्डित तलवारादि वस्तुएं थीं। इन वस्तुओं के साथ एक प्रेमपत्र भी भेजा जिसमें उपदेश था कि "बुद्धदेव और उनके कथित धर्म को ग्रहण करने से अवश्यमेव आपका और आपकी प्रजा का कल्याण होगा"। दूतों के प्रस्थान करने पर महाराज अशोक ने सिंहलदेशमें धर्मके प्रचार करने के उपायों

पर विचार किया। इन्हीं दिनों मगधाधि-पति के भ्राता राजकुमार ने भिक्षुरूप से बौद्ध धर्म में दीक्षा ली। चचा की धर्म में श्रद्धा और रुचि को देखकर राजकुमार महिन्द तथा राजकुमारी संघमित्रा ने भी दीक्षा लेली। यह महाराज के शासन का सोलहवां वर्ष था। बड़े समारोह से धर्मोत्सव सुसंपन्न हुआ।

अशोकनन्दन महिन्द की आयु इस समय २० वर्ष और राजकुमारी संघमित्रा की आयु १८ वर्ष की थी। दोनों अविवाहित थे। राजकुमार महिन्द को आज्ञा मिली कि वह सिंघलेश्वर के यहां जाकर धर्म का प्रचार करें। कुमार महिन्द निज दल के साथ लंक पहुंचा। देवानाम् प्रिय महाराज 'तिस्स' ने परमादर के साथ राजकुमार का स्वागत किया। महिन्दराजय को सहायता से सा द्वीप में भ्रमण करने लगा। उसके मुख कम से विनिसृत मधुरातिमधुर धर्म कथा वे सुनकर आबालवृद्ध मुग्ध होने लगे। महारा

तिस्स अपने ४० हजार साथियों सहित दीक्षित हो गया। राजा के अनुकरण से हजारों लोग दीक्षित होने लगे। अनेक देवियों ने महिन्द के अमृतमय उपदेशों को श्रवण किया। देवानाम् प्रिय महाराज तिस्स की राजमहिषी अनूला अपनी सखियों के साथ एक दिन महिन्द के समीप समुपस्थित हुई और भिक्षिणी (संन्यासिनी) बनने के लिये प्रार्थना की। परमधार्मिक महामना महिन्द ने विनीतभाव से उत्तर दिया कि यह कार्य मुझ से निष्पादन न होगा। मेरी धार्मिका भगिनी भिक्षणी संघमित्राने संन्यास ग्रहण कर लिया है। आप कृपाकर उसे यहां मगवालें वह यहां उपस्थित होकर आप देवियों की मनोवाञ्छा को अवश्यमेव पूर्ण करेगी।

राज्ञी अनूला ने तत्काल एक राजदूत संघमित्रा को सिंहलद्वीप मे लाने के निमित्त देवानाम् प्रिय महाराज अशोक के पास भेज दिया। संन्यासिनी राजदुलारी संघमित्रा

अनेक महिलाओं के सङ्ग संन्यासिनी बनगईं। इस समय सिंघलद्वीप के नाना स्थान में अनेक विहार और उत्तमोत्तम मन्दिर निर्मित होने लगे। पर्वतों को काटकर, वनों को जलाकर और समतल भूमि के सुरम्य स्थलों मे भिक्षुओं तथा भिक्षुकनियों के निवासार्थ विहार बनने आरम्भ होगये।

महाबोधि वृक्ष की शाखा को एक विशाल और सुरम्य उद्यान में रोपन किया गया और उस प्रमोद उद्यान नाम महामेघ वन रखा गया। इसी महामेघ वन में महास्थिवर महिन्द, भिक्ष तिस्स प्रभृति भिक्षु सङ्ग रहते थे इन्हीं दिनों महाराज अशोक के पास से महात्मा बुद्धदेव की "अस्थि" सिंघलेश्वर ने मगाई थी।

इस प्रकार राजकुमार महिन्द और राज-दुलारी संघमित्रा के उद्योग से सिंघलद्वीप मे बौध धर्म का अतिशय प्रचार होगया। राजसन्तान होने पर भी इन दोनो ने राज्य, राजभोग, स्वदेश सम्बन्धी, माता पिता,

मित्र, धन, मान, सद्भ्रम आदि समस्त सुखों को जलाञ्जलि दी और बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ अपना समग्र जीवन सिंघल द्वीप में ही व्यतीत करदिया। इन दोनों के आदेशानुसार सिंघलेश्वर ने ४० वर्ष पर्य्यन्त परम सुख से राज्यशासन, प्रजापालन और बौद्ध धर्म की परम उन्नति के साधनों का निष्पादन किया और ख्रीष्ट सन से २६६ वर्ष पूर्व अपने नश्वर कलेवर का परित्याग किया। इस घटना के चार वर्ष पश्चात् अर्थात् सन ईस्वी से २६२ वर्ष पूर्व महास्थिवर ने देह त्याग किया और एक वर्ष के पश्चात् परम भिक्षुणी संघमित्रा ने इस पञ्चभौतिक शरीर का परित्याग किया। महिन्द तथा संघमित्रा दोनों ने "महिन्तल पर्वत" में प्राण दिये थे। इसी स्थान पर आज भी अनुराधपुरा के दिव्य मन्दिर और विहार दृष्टि गोचर होते हैं।

बौद्धश्रमण महिन्द का स्वार्थ परित्याग अतीव प्रशसनीय है। उसकी भगिनी राज-

कुमारी संघमित्रा ने स्त्री होकर जिस प्रकार से अपने स्वार्थ को भस्मसात करके परहित मे जीवन को दान कर दिया वह एक अतुलनीय उदाहरण है। जब तक जगत में सत्य का मान होता रहेगा, तब तक बौद्ध धर्म का इतिहास उपस्थित रहेगा, जब तक पुण्य, निस्स्वार्थ और परोपकार की महिमा को मनुष्य गाया करेंगे एवं जब तक जगत् में पवित्र जीवन का आदर रहेगा, तब तक धर्मपरायणा, त्यागशीला, अनन्तगुण सम्पन्न, मधुरभाषिणी, दया की मूर्ति संघमित्रा का सुनाम देदीप्यमान रहेगा, तब तक संघमित्रा का जीवन अनेक नरनारियों के देहों मे धर्म पर बलिदान होने के निमित्त शुद्ध रक्तका संचार करता रहेगा। उसके नाम का नाश करदेनेवाला काल भी पवित्र देवी की अचल कीर्ति को मिटाने मे कभी भी समर्थ न होगा। माता भारतभूमि! क्या तुम अब संघमित्रा के सदृश कोई धार्मिका पुत्री और प्रसव न करोगी?

# उभय कुमारी

( १० )

उभयकुमारी मालवा देश के चन्देरी नगरी के राजा प्रतापसिंह की सुन्दरी और धर्मात्मा सुशील पुत्री थी वह हृदय की उदार और दयालु थी इसका विवाह सूरसेन नामी सैनिकपुर के राजा के साथ हुआ था, यह भी बड़ा नेक और पुरुष था। जब से उभयकुमारी इसके यहां विवाहित होकर आई थी वह दिन प्रति दिन निरन्तर सूरसेन की सेवाको अपना परमधर्म समझती थी, कहने को तो यह दोनों पति पत्नी थे, परन्तु यह दोनों बड़े धर्मात्मा थे उभयकुमारी पति से दो चार दिनके लिये भी पृथक रहना नहीं चाहती थी।

कहते हैं सूरसेन किसी कारण से श्रीवस्ती नगरी के राजा के अधीन था, साल में कभी

शत्रु पर जय लाभ करके शीघ्र तेरे पास आ जाऊंगा।

उभयकुमारी बोली नेत्रमणी! जो तुम कहते हो सत्य है जिस तरह तुम को अपने स्वामीकी आज्ञा माननी आवश्यक है मैं भी पति परायणा हूं कभी तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध काम करना नहीं चाहती किन्तु एक वर आप से मांगती हूं। वह यह है कि तीज भादो के दिन आप अवश्य यहां आजावैं ताकि मै आपकी पूजा करूं आज से चार मास पीछे तीज का दिन आवेगा मै उस समय तक आपकी प्रतीक्षा कर सकती हूं। यदि आप तीज को न आये तो फिर ईश्वर जाने मेरी क्या दशा होगी सूरसेन ने हँसकर उत्तर दिया।

प्रिये! तू तीजको कहती है मैं उससे पहले ही आजाऊंगा और तीजको तो अवश्यमेव यहां रहूंगा तू खातिर जमा रख मैं अवश्य और हानि उठाकर भी यहां पहुंच जाऊंगा इसमें सन्देह न पड़ेगा तू उस दिन अवश्य मेरी प्रतीक्षा करना।

इस प्रकार धैर्य देकर सूरसेन अपनी सेनाको साथ लेकर उमयकुमारी से बिदा होकर चला गया। उमयकुमारी ने उत्तम वस्त्र व आभूषण उतार कर रखदिये साधारण वस्त्र धारण कर लिये और अपने पति के स्थान मे रियासतका प्रबन्ध स्वयम करने लगी। रात दिन उसे अपने पति का ध्यान रहता था। जैसे योगी परमात्माके ध्यान में मग्न रहते है वैसे ही इस पतिव्रता की दशा थी, दो मास बीत गये और सूरसेन नहीं आया। किन्तु सतीके हृदय मे धैर्य था। वह जानती थी तीज के दिन अवश्य आवेंगे। हिन्दू स्त्रियों मे भादों की तीज बहुत पवित्र त्योहार समझा जाता है। इस की यथार्थता चाहे कुछ ही हो परन्तु इस दिन सुहागिन स्त्रियां अवश्य व्रत रहती है और पति की कुशलता के लिये प्रार्थना करती है। वह पति पूजा का दिन समझा जाता है। उमयकुमारी को पूरा निश्चय था कि मेरा पति इस दिन अवश्य आवेगा क्योंकि वह प्रतिज्ञा करके गये थे।

शत्रु पर जय लाभ करके शीघ्र तेरे पास आ जाऊंगा ।

उभयकुमारी बोली नेत्रमणी ! जो तुम कहते हो सत्य है जिस तरह तुम को अपने स्वामीकी आज्ञा माननी आवश्यक है मैं भी पति परायणा हूं कभी तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध काम करना नहीं चाहती किन्तु एक वर आप से मांगती हूं। वह यह है कि तीज भादों के दिन आप अवश्य यहां आजावें ताकि मैं आपकी पूजा करूं आज से चार मास पीछे तीज का दिन आवेगा मैं उस समय तक आपकी प्रतीक्षा कर सकती हूं। यदि आप तीज को न आये तो फिर ईश्वर जाने मेरी क्या दशा होगी सूरसेन ने हँसकर उत्तर दिया ।

प्रिये ! तू तीजको कहती है मैं उससे पहले ही आजाऊंगा और तीजको तो अवश्यमेव यहां रहूंगा तू खातिर जमा रख मैं अवश्य और हानि उठाकर भी यहां पहुंच जाऊंगा इसमें सन्देह न पड़ेगा तू उस दिन अवश्य मेरी प्रतीक्षा करना ।

में व्यतीत हुआ सन्ध्या होगई सूरसेन नहीं आया अब इस को चिन्ता होने लगी वह युद्ध में गया था ईश्वर जाने क्या हुआ हो समाचार भी कुछ नहीं मिले थे उसकी चिन्ता क्षण प्रति क्षण बढ़ती गई अब तक उसने कुछ सोच विचार नहीं किया था अब वह इस प्रकार सोचने लगी, क्या कारण है अब तक स्वामी जी नहीं आये अर्द्ध रात्रि के लगभग बीत गई कुछ पता नहीं ईश्वर क्या हुआ स्वामी क्यों न आये। क्षत्रि का वचन कभी मिथ्या नहीं होता फिर कारण क्या है इस के हृदय मे चिन्ता की आग प्रज्वलित हुई वह रह २ कर व्याकुल होती थी हृदय में चैन नहीं पड़ता था।

उसको यह निश्चय होगया कि स्वामी अवश्य युद्ध में स्वर्ग को सिधारे अब मुझे भी वहीं चलना चाहिये क्योंकि पति के बिना इस संसार मे स्त्री का दूसरा कौन है स्वामी स्त्री को नर्क मे छोड़ कर स्वर्ग का पयान करे तो फिर स्त्री को यहां और कौनसी प्यारी वस्तु है जिसके लिये यहां रहे अब संसार कुछ नहीं है उसको यह

इस काल में सूरसेन निरन्तर शत्रुओं से लड़ता रहा इसको अवकाश नहीं मिला कि घर को आदमी रवाना करता। इसने विजय प्राप्त करली। शत्रुओं को जीतकर श्रीवस्ती नगरी में पहुंचा। तीज के त्यौहार मे केवल दो दिन बाकी थे। श्रीवस्ती के राजा ने उसका बड़ा सन्मान किया और चाहा कि वह तीन चार दिन वहां अतिथि रहे उसने कर जोड़ कर कहा महाराज! मेरी स्त्री प्रतीक्षा में होगी। यदि मैं तीज को न पहुंचा तो कुशल न होगी राजा ने रोकना उचित न समझा सूरसेन तेज सांडिनी पर चढ़कर चल पड़ा।

उभयकुमारी का हाल सुनिये वह दिन प्रति दिन प्रतीक्षा करती रही निदान तीज का दिन आ पहुंचा इस दिन वह बड़ी आनन्दित थी क्योंकि पति के मिलने की आशा थी उसने नहा धोकर अच्छे वस्त्र और आभूषण पहने पुष्पों की वेणी अपने बालों में लगाई सारा दिन पूजा त्यौहार की रीति

# कृष्णा कुमारी

( ११ )

अभी थोड़ा ही समय व्यतीत हुआ है अधिक दिन नहीं हुए। हिन्दूपति चित्तौर नरेश महाराणा भीमदेव के एक कन्या कृष्णाकुमारी थी उसके रूप की प्रशंसा सारे भारतवर्ष मे फैल रही था, उस सुकुमारी की सुन्दरता का वर्णन अभी तक कोई कवि भली भांति नही कर सका है। वह मृगलोचनी वास्तव मे लक्ष्मी का अवतार थी। महाराणा ने उसका बिवाह मारवाड़ नरेश से ठहराया था पर बिवाह होने से पहिले ही मारवाड़ नरेश स्वर्ग को सिधारे, उनको बैकुण्ठवास हो जाने पर कुमारी का बिवाह अम्बर नरेश प्रसिद्ध जगतसिंह के सग नियत हुआ। पर नये मारवाड़ के राजा महाराजा मानसिंह ने भी अपना स्वत्व जमाया भला

चिन्ता यहाँ तक बढ़ी कि उसका शरीरांत हो गया। जब सूरसेन लौट कर आया और महल में पूछा रानी कहाँ है एक दासी ने कर जोड़कर कहा महाराज, रानीजीने आज व्रत रक्खा था दिन भर आप के मिलने के हर्ष में मग्न थीं शाम तक आपकी प्रतीक्षा को फिर जाकर चिन्ता में पड़ रहीं। सूरसेन ने जाकर देखा तो उसके प्राण शरीर को छोड़ चुके थे सूरसेन के लिये दुनियाँ को अंधेरा कर गई, सूरसेन को जो दुःख हुआ उस को हमारी लेखनी नहीं लिख सकती उसने बांदियों को पुकारा वह सब दौड़कर आई और रानी की दशा देखकर रोने लगीं। सूरसेन को भी बड़ा ही दुःख हुआ उसने दासियों से कहा अब बाहर जाओ जब सब बाहर गईं उसने एक बार अपनी पत्नी को दृष्टि भर कर देखा ऐसा जान पड़ता था मानों अभी सोई है सूरसेनने बड़ा विलाप किया। उभयकुमारी तू धन्य थी परमात्मा करै हमारे देश की सभी स्त्रियां ऐसी हो पतिभक्ता हों कि पति के सुखमे सुख और दुख में दुःख मानकर संसारमें पति कोही अपना सर्वस्व समझें।

इस समय मैं उस गद्दी पर हूं इस से कुमारी का विवाह मुझ ही से होना चाहिये। महाराना जी अम्बर नरेश को वचन दे चुके थे अब वह किं कर्त्तव्य विमूढ हो रहे थे। हाय जिस चित्तौर नरेश की ओर सारे भारत के नृपतिगण ताकते थे हाय जिस चित्तौर नरेश की टेढ़ी दृष्टि से सारा संसार कंपायमान हो जाता था, जिस चित्तौर नरेश के आगे सब राजे महाराजे अपना मस्तक झुकाते थे, जिसकी सेवा करने मे वे अपना गौरव मानते थे आज उसीकी यह दशा हो रही है कि अपनी राज कन्याका विवाह अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकता हाय हाय भगवान रामचन्द्र, वापारावल वीरवर सांगा, स्वदेश प्रेमी समरसिंह महाराणा, जगत प्रसिद्ध राजसिंह के वंशधरकी आज यह दशा, राजपूत राजाओं को वह चित्तौर से नहीं हटा सका। जिनके पूर्व पुरुषों ने अफगानिस्तान, विलोचिस्तान तक अपनी विजय पताका फहराई थी जो वंश भारत

ऐसे अमूल्य रत्न को कौन नहीं चाहता, सेंधिया किसी कारण जगतसिंह के विरुद्ध हो गया था और उसने मानसिंह का पक्ष लिया। पहिले तो ये दोनों महाराजे आपस में भली भांति लड़े, रक्त की नदियां बहाईं और असंख्य वीर राजपूत उन लड़ाइयों मे काम आये। राजपूताने मे प्रलय मच रही थी इस समय मेवाड़ को जैसी बुरी दशा थी वैसी कभी किसी ने स्वप्न मे भी नही देखी होगी मरहठों ने उसकी दुर्दशा कर रखी थी। स्वर्ग समान मेवाड़ प्रान्त मानो जङ्गल हो रहा था। हिन्दूपति का तेज नष्ट हो चुका था। अब उन दोनों महाराजाओं ने चित्तौर के पास अपने डेरे डाले और यदि कुमारी का विवाह किसी एक के साथ हो जाय तो दूसरा केवल उसी को नाश करने को नहीं चित्तौर को भी उलटा देने को प्रस्तुत था। महाराजा मानसिंह ने कहला भेजा कि कुमारी का विवाह मारवाड़ नरेश से ठहरा था न कि किसी विशेष व्यक्ति से

इस समय मैं उस गद्दी पर हूं इस से कुमारी का विवाह मुझ ही से होना चाहिये। महाराना जी अम्बर नरेश को वचन दे चुके थे अब वह किं कर्त्तव्य विमूढ़ हो रहे थे। हाय जिस चित्तौर नरेश की ओर सारे भारत के नृपतिगण ताकते थे हाय जिस चित्तौर नरेश की टेढी दृष्टि से सारा संसार कंपायमान हो जाता था, जिस चित्तौर नरेश के आगे सब राजे महाराजे अपना मस्तक झुकाते थे, जिसकी सेवा करने मे वे अपना गौरव मानते थे आज उसीकी यह दशा हो रही है कि अपनी राज कन्याका विवाह अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकता हाय, हाय भगवान रामचन्द्र, वापारावल धीरवल सांगा, स्वदेश प्रेमी समरसिंह महाराणा, जगत प्रसिद्ध राजसिंह के वंशधरकी आज यह दशा, राजपूत राजाओं को वह चित्तौर से नहीं हटा सका। जिनके पूर्व पुरुषों ने अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान तक अपनी विजय पताका फहराई थी जो वंश भारत

का सरताज माना जाता था, जिसने अकेले अकबर ऐसे प्रबल शत्रु के दांत खट्टे कर दिये थे। जिसने औरंगजेब ऐसे बादशाह को नीचा दिखाया था, जिसने सदा भारत वर्ष को संकट से बचाया था, जिसने अपना मान कठिन से कठिन समय पर भी नहीं गंवाया था आज वही वंश अनाथ की भांति इधर उधर देख रहा है ऊंटको किसी स्थान में अपनी नाक भर रखने का स्थान मिले फिर तो वह गर्दन भी डाल देता है। जैचंद और पृथ्वीराज आपस मे लड़े और फिर पामर जैचंदने मुहम्मद गोरी को बुलाकर अपनी प्यारी जन्मभूमि को पराधीन बना दिया। केवल वीरबल पृथ्वीराज का ही नहीं किन्तु अपने वंश और जीवन के नाश का भी मूल कारण हुआ। राघोवा और नाना-फरनवीस ने इसी प्रकार लड़कर महाराजा-धिराज श्रीमहाराज शिवाजी के सारे उद्योग निष्फल कर दिये। उसी प्रकार मेवाड़ राज-वंश की २ मूल शाखायें चन्द्रावत और सक्ता-

वश आपस मे लड़ीं और मरहठों को बुलवाया ; उन्होंने आकर भली भांति लूटमार मचाई और मेवाड़ उजाड़ दिया। हा कौन जाति ऐसी वीर संसार मे उत्पन्न हुई है जो राजपूतों का सामना कर सके, उनकी ओर आंख उठाकर देख सके।

उधर तो मरहठे सब कुछ लूट ले गए, इधर आपस मे फूट पड़ी है और अब बाहर से चढ़ाई हुई सो भी किसी और सामान्य जातिकी नहीं वीर राजपूतो ही की। केवल मेवाड़ ही की बुरी दशा नहीं है सारे भारत में किसी न किसी प्रकार की खलबली मची हुई है। जब हिन्दू पति की यह दशा थी तब भारतवर्ष किसका मुंह देख कर जीता रहता ऐसे संकट से भला भारत और हिन्दूपति को कौन सम्हालता।

कौन स्वदेश प्रेम के पवित्र मंत्र से उत्साहित हो शत्रुओं पर टूट पड़े और उनको दूर हटावे। कोई नहीं प्रकृति चिल्ला कर कहती है कोई नहीं। भारत की आर्य्य

लक्ष्मी शत्रुओं के यहां वेड़ियों में जकड़ी हुई बोली "कोई नहीं" हाय! प्यारी भारत भूमि आज अनाथिनी है। पतिपुत्र विहीना है। आज वह दुष्ट विश्वासघाती बेईमान शत्रुओं के कठिन कारागार में कैद है। अब महाराणाजी को क्या उपाय करना था। बहादुरी से लड़कर प्राण देना, परन्तु वह तेज तो आपस में फूट पड़ने से पहले ही नष्ट हो चुका था। फिर कैसे इस डूबे हुए मेवाड़ की रक्षा करते। अब केवल एक यही उपाय था कि इस झगड़े की अग्नि कुमारी के रक्त से बुझाया जाय। महाराज दौलतसिंह राणाजी के एक नातेदार इस कार्य्य मे नियत किये गए उनसे कहा गया कि आप प्यारी कृष्णा का प्राणघात कर मेवाड़ के मान की रक्षा कीजिये। उस वीर ने कानों पर हाथ रक्खे और बिगड़ कर कहा, जिस मुख से ऐसे वचन निकले वह फट न गया, जिस मनुष्य का ऐसा विचार हुआ वह पहले ही मर न गया। राणा जी

का साथ देने का यह अर्थ है तो मै उनका साथी नहीं यदि ऐसा कर्म करने से उनके शत्रुन्तो मे गिनती हो तो मै बाज आया तब महाराजा जीवनदास की सहायता मांगी गई। यह एक प्रकार से महाराना जी के भाई थे। उनको उस कार्य की आवश्यकता समझाई गई, और कहा गया कि यह काम साधारण पुरुष से नहीं कराया जा सकता। उन्होंने ऐसा करना स्वीकार किया और खड्ग ले प्यारी कृष्णाके राजभवन मे गये परन्तु जब वह भोली सुन्दरी उनके सामने आई तो खड्ग हाथ से छूट पड़ा और जीवनदासजी बुरी अवस्था मे वहां से लौटे परन्तु इससे उनके आने का अर्थ प्रकाशित हो गया कृष्णा की माता ने सारे महल में हाहाकार मचा दिया। परन्तु सब निष्फल हुआ यदि लोहे ने काम पूरा न किया तो क्या विष सहायक न होगा विषका कटोरा पिताकी ओर से उसको दियागया स्नेह और आदर से उसने उसको लेकर पी लिया और परमात्मा

से अपने पिता की आयु वृद्धि और बलकी प्रार्थना की। उसकी माता राणाजी को धिक्कारती थी पर कुमारी प्रसन्न चित्त उसको यों समझाती थी 'माताजी! आप क्यों क्लेश करती हैं। इस संसार की विपत्तों को सहन करने का समय हमारे लिये और कम होगया मुझे मृत्यु का कुछ भी भय नहीं। क्या मैं आपकी पुत्री नहीं हूं। फिर मुझे मौत का क्या भय? राजपूत बालाओं को तो सदा प्राण त्याग करने को प्रस्तुत रहना ही चाहिये। भला राजपूतों को मौत का भय! आप यह क्या अनर्थ करती हैं! राजपूतों के नाम को न हंसाइये मै सोलह वर्ष तक जीवित रही इसके लिये मुझे अपने पिता को धन्यवाद देना चाहिये। आप मेरे लिये अपने चित्त को उदास न करें-आ मेरा अन्तिम प्रणाम स्वीकार कीजिये माताजी प्रसन्न होकर मुझे बिदा कीजिये मेरे मरने से मेरे देश की रक्षा होती है मैं बड़ी भाग्यवती हूं। अहा! अपना प्राण

त्यागकर मैं अपने देश को बचाऊंगी। माताजी मुझे विदा कीजिये मेरे अपराधों को क्षमा कीजिये अब मेरी आप से भेंट न होगी कुमारी अपनी माता को इसी प्रकार समझाती रही। बड़ी देर हो गई पर विषने कुछ असर न किया दूसरा कटोरा दियागया वह उसको भी पी गई, वह भी निष्फल हुआ ऐसे भोले और प्यारे स्वरूप पर लोहा, तथा विष के लिये किसी का हाथ नहीं उठता, संसार को ऐसी देवी रहित करने का अपयश अपने ऊपर कौन लेता ? तीसरा विष का कटोरा दिया गया उसका भी कुछ प्रभाव न हुआ। चौथा कटोरा और महा विकट विष का बनाया गया, प्यारी कृष्णा ने औरों की भाँति प्रसन्नता पूर्वक उसको भी पान करलिया परन्तु अब विष कहांतक मना करता अन्त मे उसने अपना काम किया। कृष्णा कुमारी सो गई सदा के लिये, हाय ! आज ऐसी देवी ससार से उठगई। कोई क्या करे ईश्वरेच्छा प्रबल है। कृष्णा

की माता ने भी खाना पीना छोड़ दिया और कुछ ही दिनों में अपनी प्यारी पुत्री का साथ दिया ।

प्यारी कृष्णा ! तू धन्य थी तेरे साहस को धन्य है परमात्मा करे हमारे देश की सभी कन्याएं अपने बड़ों की मान मर्यादा का सदैव ध्यान रक्खें ।

---

# भारत का नारी इतिहास

## प्रथम भाग ।

कई वर्ष का समय व्यतीत हुआ तब भारत का नारी इतिहास प्रथम भाग छापा था उसे पाठिकाओं ने बहुत पसन्द किया और उसकी बीस हजार प्रतियां बहुत थोड़े समय में ही बिकगई उन्हे पढ़ सुनकर दूसरे भाग के लिये कई हजार चिट्ठियां आई इस लिये हमने इस दूसरे भाग को छपाकर सबकी सेवा में भेजा है ।

तीसरा भाग भी शीघ्रही छपैगा अभी से होने वाले ग्राहकों को १) में ही मिलैगा । इसके कई भाग होंगे । कई भागों में ५०० पांच सौ जीवन चरित्र पूरे किये जावेंगे ।

यशोदादेवी.

# कर्मदेवी

( १२ )

प्राचीन समय में कन्याए बड़ी वीर और साहसिन होती थीं जिनका नाम अब भी इतिहासों में चला आरहा है प्यारी पाठिका यो आजमै तुम्हें जिस साहसिन बालिका की कथा सुनाती हूं उसका नाम कर्मदेवी था यह माहल राज के सेनापति की कन्या थी कर्मदेवी बड़ी चतुर, पढी लिखी वीर और साहसिन थी इसके गुणो की चर्चा देश भरमें फैली हुई थी।

इसके गुणो को देखकर बडे बडे राजा अपने पुत्र का विवाह इसके साथ करने का विचार कर रहे थे सभी की इच्छा इस गुणवती कन्या को पुत्रवधू बनाने के लिये हर समय रहती थी परन्तु इसके माता पिता भी यही चाहते थे कि पुत्री की समान ही

गुणवान वर मिलने पर विवाह कियाजावेगा।

बड़े सोच विचार के साथ कर्म्मदेवी का विवाह साधु नामक गुणवान वर के साथ हुवा विवाह निश्चय हो जाने पर जो राजा पहिले से ही इस गुणवती को अपनी पुत्र-वधू बनाकर अपने ग्रहस्थ को स्वर्गधाम बनाना चहते थे उनको दुःख हुआ। मन्दोर के राजा को तो यह बात बहुत ही बुरी लगी उसने अपनी फौज को आज्ञा दी कि साधु को उसकी स्त्री कर्मदेवी सहित पकड़ लाओ और उनके साथ जो बाराती आये हों सबको पकड़लो यह विचार कर चार हजार सेना लेकर बारात आनेके मार्ग को घेर लिया कर्मदेवी की विदा करा साधु वहां से चल दिया मार्ग मे यह दशा देखकर बड़ा दुःखी हुआ उसने मन्दोर के राजा से कहा। आपकी इच्छा यदि लड़नेकी है तो अकेले आप मेरे साथ लड़िये अधिक हत्याएं करने से क्या लाभ होगा। दोनों ओर से यह बात मान ली गई साधु ने आकर अपनी स्त्री

कर्मदेवी से लड़ने की सलाह ली उसने बड़े उत्साह से कहा आप जाइये मैं भी आती हूं हम लोग शत्रु से बिना युद्ध किये निश्चिन्तता से न रह सकेंगे इसलिये लड़ना ही पड़ेगा।

कर्मदेवी ने पति को युद्ध के लिये सजा कर तैय्यार किया और कहा स्वामी! आज मैं तुम्हारी वीरता देखूंगी यदि आपने शत्रु को जीत लिया तो हम लोग आनन्द पूर्वक रहेंगे और यदि शत्रु की जीत हुई तो मैं भी आपके साथ ही प्राण त्याग करूंगी। इस प्रकार कर्मदेवीने अपने पति का उत्साह बढ़ाकर युद्ध मे भेजा।

रणभूमि में जाकर युद्ध आरम्भ होगया कर्मदेवी का पति बड़ी वीरता से लड़ा अन्त को वह ऐसा घायल हुआ कि बचने की आशा न रही, कर्मदेवी यह समाचार सुन मर्दाने कपड़े पहिन अस्त्र शस्त्रसे सुसज्जितहो लड़ाई के मैदान में आई उसने शत्रु सेना के छक्के छुटा दिये। उसका पति मूर्छित हो

पृथ्वी पर गिर पड़ा जब सेना में खलबली मच गई परन्तु कर्मदेवी साहस किये हुए लड़ाई के मैदान में डटी रही और शत्रु सेनाको मार भगाया फिर उसने अपना एक हाथ काटकर अपने ससुर के पास भेजवा दिया और दूसरा हाथ अपनी सेना के एक सरदार से कटवा कर माता पिता के पास भेज दिया। कर्मदेवी की वीरता साहस और पति भक्ति को सुनकर माता पिता सास ससुर दोनों घरों में कोलाहल मच गया सब उसकी प्रशंसा करने लगे।

कर्मदेवी भी पति के साथ ही साथ स्वर्ग को सिधारी प्यारी पाठिकाओ ! क्या तुम कर्मदेवी के वीरता और साहस तथा पातिव्रत धर्मको सराहना न करोगी जिसने पति पत्नी के सच्चे धर्मका पालन किया जिसकी कीर्ति पताका अब तक हमारे देश के इतिहास में फहरा रही है, यदि उसमें यह अपूर्व गुण न होते तो आज उसकी यह कथा तुमको क्यों सुनाई जाती आज उसका नाम कौन जानता।

मनुष्य मात्र, की क्या स्त्री क्या पुरुष मनुष्य जन्म लेकर अवश्य ऐसे गुण प्राप्त करने चाहिये जिससे मरने पर भी ससार में आदर सहित उसका नाम लिया जावे और दूसरों के लिये उसका चरित्र आदर्श कहलावे।

कर्म्मदेवी तू वास्तव में देवी थी तेरा साहस तेरी धीरता तेरी बाल्यावस्था की शिक्षा और तेरी माता को धन्य है।

---

# झांसी की रानी

## संक्षिप्त वृतान्त ।

( १२ )

भारतवर्ष की प्रसिद्ध वीर स्त्रियों में झांसी की रानी लक्ष्मी बाई गत उन्नीसवीं शताब्दी में तारा चन्दा के पीछे अर्थात सब से अंतिम रानी हो गई है झांसी नगर बुंदेलखंड के पहाड़ी प्रदेश मे बसा हुआ है जहां के राजा गंगाधर राव की यह रानी थी ।

इसमें असाधरण धैर्य शौर्य और बुद्धि की कौशलता थी, जिसकी प्रशंसा मे बड़े बड़े विद्वानों ने अपने उच्च अभिप्राय को प्रगट किया है । परन्तु तो भी उसके चरित्रों से इतना तो जानना ही चाहिये कि उसने अविचारी साहस से अंग्रेजों के विरुद्ध जो पागलपन किया, वह ठीक नहीं किया क्योंकि अन्त में सब विपत्ति उसके ही ऊपर आपड़ी और अपयश पाया ।

सन् १८५३ ई० में रानी लक्ष्मीबाई के स्वामी ने आनन्दराव नामक लड़का गोद लिया और पुत्र को छोड़ परलोक गमन किया। राजा ने पहिले ही ब्रिटिश रेजीडेण्ट को जता दिया था कि जो कदाचित् ईश्वर की इच्छा से मेरा मरण हो जावै तो मेरे इस बालक के ऊपर तथा मेरी बिधवा स्त्री पर कृपा दृष्टि रखना। दैवयोग से इस ही समय में नागपुर तथा सतारे के राजा भी परलोकगामी हुये और उनका राज्य सर्कारी राज्य में मिला दिया गया इस कारण कितने ही एक रजवाड़ों में खलबली पड़ गई कि सब पुराने रजवाड़े चले जायगे। इतने में अर्थात् सन् १८५७ ई० में बड़ा भारी बलवा हुआ। जिसने बलवान ब्रिटिश राज्य को यह बात प्रगट करदी कि आपत्ति के समय पर एक निष्ठता से देशी रजवाड़े ही सहायता देने वाले हैं और वही राज्य के स्तम्भ है।

राजा गङ्गाधरराव का परलोकवास ... रानी लक्ष्मीबाई ने अपने गोद

# झांसी की रानी

## संक्षिप्त वृतान्त।

( १२ )

भारतवर्ष की प्रसिद्ध वीर स्त्रियों में झांसी की रानी लक्ष्मी बाई गत उन्नीसवीं शताब्दी मे तारा चन्द्रा के पीछे अर्थात सब से अंतिम रानी हो गई है झांसी नगर बुंदेलखंड के पहाड़ी प्रदेश मे बसा हुआ है जहां के राजा गंगाधर राव की यह रानी थी।

इसमे असाधरण धैर्य शौर्य और बुद्धि की कौशलता थी, जिसकी प्रशंसा में बड़े बड़े विद्वानों ने अपने उच्च अभिप्राय को प्रगट किया है। परन्तु तो भी उसके चरित्रों से इतना तो जानना ही चाहिये कि उसने अविचारी साहस से अंग्रेजों के विरुद्ध जो पागलपन किया, वह ठीक नहीं किया क्योंकि अन्त में सब विपत्ति उसके ही ऊपर आपड़ी और अपयश पाया।

सन् १८५३ ई० में रानी लक्ष्मीबाई के स्वामी ने आनन्दराव नामक लड़का गोद लिया और पुत्र को छोड़ परलोक गमन किया। राजा ने पहिले ही ब्रिटिश रेजीडेण्ट को जता दिया था कि जो कदाचित् ईश्वर की इच्छा से मेरा मरण हो जावे तो मेरे इस बालक के ऊपर तथा मेरी विधवा स्त्री पर कृपा दृष्टि रखना। दैवयोग से इस ही समय मे नागपुर तथा सतारे के राजा भी परलोकवासी हुये और उनका राज्य सर्कारी राज्य में मिला दिया गया इस कारण कितने ही एक रजवाड़ो मे खलबली पड़ गई कि सब पुराने रजवाड़े चले जांयगे। इतने मे अर्थात् सन् १८५७ ई० में बड़ा भारी बलवा हुआ। जिसने बलवान ब्रिटिश राज्य को यह बात प्रगट करदी कि आपत्ति के समय पर एक निष्ठता से देशी रजवाड़े ही सहायता देने वाले हैं और वही राज्य के स्तम्भ है।

राजा गङ्गाधरराव का परलोकवास होते ही रानी लक्ष्मीबाई ने अपने गो

लिये हुये पुत्र को गद्दी पर बिठाने की इच्छा की, परन्तु लार्ड डैलहौसी ने यह बात नहीं मानी और राज्य अंग्रेजी राज्य में मिला दिया। इस कारण रानी निराश होकर अत्यन्त दुःखित होगई। कहा जाता है कि उसको नित्य के आवश्यकीय व्यय के निमित्त भी कठिनता होने लगी थी वरन् उसके ऊपर ऋण भी हो गया था, जब ऋण देनेवाले महाजनों ने रानी के ऋण के व्याज की सर्कार में सूचना दी तब उसकी पिंशन से रुपया काटकर महाजनों को चुकाये जाने का निश्चय किया गया। परन्तु रानी ने इस बात से दुःखित हो गवर्नर-जनरल से प्रार्थना की, कि वर्त्तमान में मेरा राज्य सर्कार के आधीन है अतएव सर्कार से ही मेरे ऋण का व्याज चुकाया जावे। मेरी तुच्छ पिंशन से कैसे पूरा पड़ैगा, पहिले तो मेरी पिंशन ही इतनी थोड़ी है कि मेरा खर्च उससे पूरा नहीं पड़ता फिर उसमें से व्याज का रुपया काट कर महाजनों को

दिया जायगा तो फिर मैं अपने दिन किस प्रकार से काट सकूंगी परन्तु इस प्रार्थना का कोई संतोषकारक उत्तर न मिला।

तीन वर्ष बीतने पर सिपाहियों ने बलवा किया। झांसी की सेना के सिपाहियों को बहकाकर उसने आगे किया और उनकी सहायता से ता० ४ जुलाई सन १८५७ ई० को जिस किले में अंग्रेजो ने अपने कुटुम्ब सहित शरण ली थी उसको जा घेरा। इतनी भारी भीड़ के सन्मुख लड़ना व्यर्थ जान, प्राण बचाने की आशा से उन्होंने किले का द्वार खोला, कि बाहर निकल जावे परन्तु रुधिर के प्यासे सिपाहियो ने धर्म तथा न्याय का बिना विचार किये बड़ा भारी अनर्थ किया। कहा जाता है कि इस भयंकर उत्पात में केवल एक ही पुरुष जीवित निकला था। इन निरपराधियो के वध का अपराध रानी लक्ष्मीबाई पर लगाया जाता है और उसकी ही आज्ञा से इस घोर युद्ध का होना भी माना जाता है।

तदनन्तर रानी लक्ष्मीबाई ने पुनर्वार झांसी का राज्य स्थापित किया और फिर युद्ध का होना विचार कर रामचन्द्र के समय की बीस तोपें पृथ्वी में से निकालीं तथा लगभग चौदह सहस्र मनुष्यों की सेना इकट्ठी की इस बात को हुये एक वर्ष भी पूरा न बीतने पाया कि अंग्रेजों को फिर से जय होने लगी। सरह्यूरोज की सेना ने ता० २५ वीं अप्रैल सन् १८५८ ई० के दिन झांसी को चारों ओर से घेर लिया और गोली की वर्षा बाहर से होने लगी, झांसी के सिपाही दिल खोलकर सर्कारी सेना से लड़े और उनकी स्त्रियों ने भी तोपखानों से रहकर उनका अगला भाग लिया। इस समय तीन हजार सिपाही रानी लक्ष्मीबाई ने अपने महल की रक्षा के निमित्त खड़े कर रक्खे थे, परन्तु बलवान ब्रिटिशराज्य के प्रतिदिन बढ़ते हुये बल ऐश्वर्य और प्रताप के सामने उनकी वीरता, पौरुष, साहस तथा बुद्धि कुछ भी काम न आई।

दूसरे दिन झांसी नगर का और तीसरे दिन गढ़ छीन लिया गया। तौ भी थोड़े से स्वामिभक्त सवारों की सहायता से रानी प्राण लेकर भाग गई। दो हजार सैनिक सिपाहियों के साथ वह कालपी की सड़क के ऊपर उतरी और ता० २६ वीं मई को वहां से चल कर ग्वालियर मे आई और वहां की बिगड़ी हुई सेना से जा मिली, ग्वालियर विजय होने के पीछे वहां से भागकर शिप्रा नदी के किनारे की ओर गई परन्तु मार्ग मे एक अंग्रेजी सेना से युद्ध हुआ अन्त में ता० १७ वीं जून सन् १८५८ के दिन रानी अत्यन्त वीरता से लड़कर कट मरी और उसकी सब सेना बिखर गई। उस दिन चार तोपें अंग्रेजों के हाथ में आईं। कहा जाता है कि इस युद्ध मे लक्ष्मीबाई के साथ उसकी बहिन भी लड़ाई में मारी गई थी और वह भी उसकी ही समान पराक्रमी थी।

निःसन्देह रानी लक्ष्मीबाई, इस शताब्दी मे भारतवर्ष के बीच महावीर और बुद्धि-

मनी हो गई है। उसके राज्य का प्रबन्ध सब प्रकार से भला था परन्तु बलवाकरवाने तथा सेना बिगड़वाने का कलंक उस के ऊपर छाया इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, इतिहासो मे उसका यह अपयश सदैव चला ही जायगा उसकी वीरता साहस और चतुराई भारत के इतिहास की शोभा बढ़ा रही है।

---

# पन्नाबाई

( १४ )

मेवाड़ के प्रतापी महाराना बप्पाराव के वंशधर राना संग्रामसिंह का जब परलोक हुआ, तब उनकी गद्दी का अधिकारी कुमार उदयसिंह केवल छ. वर्ष का था

इस समय उसके लालन पालन करने का काम पन्नाबाई नामक एक स्त्री को सौंपा गया। वह पुत्र से भी अधिक प्रेम कुमार पर रखती थी, यह मिथ्या नहीं वरन यथार्थ ही में सत्य था, कि जो उसके चमत्कारिक वृत्तान्तो से स्वयं ही समझ में आजायगा। कुमार को बालक देख कितने एक नीच राजद्वारी स्वयं गद्दी पर बैठने का प्रयत्न करने लगे।

संग्रामसिंह का खवास ( दास ) बनबीर स्वयं गद्दीपति होने का प्रयत्न करता हुआ

कितने ही बखेड़ों को करने लगा। जब उसका कोई भी यत्न काम न आया तब अन्त में उस दुष्ट ने राजकुमार के मार डालने की चेष्टा की, परन्तु दैवेच्छा से उसकी चेष्टा को एक नाई जान गया। वह शीघ्रता से पन्नाबाई के समीप जाय कहने लगा,-बनवीर खवास राजकुमार के मार डालने का यत्न कर रहा है, वह आज ही आकर तुम से राजकुमार को मांगेगा, अतएव मै तुम्हें सावधान करने आया हूं। इस आश्चर्य कारक बात से पन्नाबाई के रोम२ मे विष फैल गया और क्रोध से उसका रुधिर भीतर ही भीतर उबलने लगा। तथापि मन मार साव-धान हो विचार करने लगी, विचार करते करते उसने राजकुमार को फूलो के एक बड़े टोकरे में छिपाय गुप्त स्थान मे लेजाने के निमित्त उस नाई को सौंपा। थोड़ी ही देर में वह उपद्रवी बनवीर वहाँ आकर पूछने लगा कुवरउदयसिंह कहां है। पन्नाबाई ने बिना कुछ घबड़ाये जिस पालने में उदयसिंह के

समान ही अपना पुत्र लेटा था उस पालने की ओर उंगली दिखादी, हिंसक बनबीर ने एक साथ ही कमर से तलवार निकाल कुंवर की गर्दन पर आघात किया और अपने कार्य मे सफलता मान कर चला गया।

पापी बनवीर को उसके घोर पाप का पूरा २ फल मिल गया तथा उसको अत्यन्त अधम दशा हुई, क्योंकि न्यायी ईश्वर बिना पाप पुण्य का बदला दिये नही रहता। पुत्र को कटा हुआ देख पन्नाबाई आंसू बहाकर रोने लगी। थोड़ी देर मे ही वह बाई जिस स्थान पर राजकुमार को रख आया था वहां गई और उसको देख अपने जलते हुये हृदय को धैर्य दिया। परोपकारी पन्ना-बाई ने इस प्रकार अपने पुत्र को कटवाय अपनी राजभक्ति प्रकाशित की, वरन एक होनहार राजा के प्राण बचाकर इतिहास में अपना नाम अमर कर गई। धन्य है ऐसी परोपकारिणी और धैर्यवती तथा राजभक्त स्त्रियों को धन्य है।

# रानी भवानी

( १५ )

यह महारानी छातिम गांव के चौधरी आत्माराम की पुत्री थी इसका व्याह नाटौर के जमीदार राजा रामजीवनराय के पुत्र रामकांतवेर से हुआ था, रानी भवानी रूपवान, सुंदरता, धर्मशील और परोपकारिणी थी।

राजा रामजीवनराय का दयाराम नामक एक प्राचीन नौकर था। वह एक बार राजकुमार रामकान्त को कुछ भूल करता हुआ देख शिक्षा देने आया परन्तु रामकान्त ने अविचार से उसको अलग कर दिया। दयाराम वहां से चला गया और बंगाल के सूबेदार महाशय अलीवर्दीखां के यहां पहुंचा कि जिसका उस राज्य पर बहुत कुछ कर चढ़ा था दयाराम ने वहाँ जाकर प्रगट किया कि

राजा रामकान्त से बत्तीस लाख रुपया इकट्ठा किया है और दो लाख रुपये का तो वह शिरपेच पहिने हुये है। फिर क्या कारण है जो आपको कर नहीं देता।

इस बात से नव्वाब ने सेना भेज रामकान्त की मिल्कियत लूट ली, वरन् राजकाज के निमित्त उसे अयोग्य ठहराया, इस कारण देवीप्रसाद नामक उसके भतीजे को समस्त अधिकार सौंप दिया राजा रामकान्त इस घटना से इतना दुःखी हुआ कि रानी भवानी को साथ ले वहां से चलागया। यद्यपि रानी गर्भवती थी तथापि बिना कुछ कहे सुने पति की आज्ञानुसार वहां से चल पड़ी। चलते २ वह गङ्गा के किनारे आय नाव पर बैठ मुर्शिदाबाद आई और एक घर लेकर वहा रहने लगी।

दैवयोग से एक बार रामकान्त और दयाराम का मिलाप हुआ। दयाराम ने रामकान्त से कहा कि पचास हजार रुपया दो तो तीन दिन में तुम को तुम्हारा राज्य

दिलवा दू और सब दुःख दूर हो जावै। रामकान्त का मन धन के कारण अत्यन्त ही दुःखी हुआ वह दीन बचनों से अधीनी करता था कि रानी भवानी बोल उठी प्राणनाथ! आप किस कारण दुःखी होते है। और अर्थ लाख देकर ही आप को राज्य पाट मिलता हो आपका मन प्रसन्न रहता हो तो मेरे यह सब आभूषण ले जाकर उसे दे दो। ऐसा कह रानी ने सब आभूषण निकाल दिये। दयाराम ने वह सब नव्वाब को दे रामकान्त की बड़ाई की और अन्त में समस्त राज्याधिकार उसी को दिलवा दिये। राजा रामकान्त और रानी भवानी के पवित्र प्रेम में निरन्तर वृद्धि होती रही। पीछे उसके दो पुत्र हुये, दैवेच्छा से यह दोनों पुत्र मर गये और राजा रामकान्त भी सोलह वर्ष राजगद्दी भोग परलोकवासी हुआ। रानी भवानी ने वैधव्य धर्म का पालन कर धर्म शील स्त्रियों मे अपनी कीर्ति फैलाई, और इतिहासमे अपना नाम अमर करगई।

# कलावती

( १६ )

कर्णसिंह राजपूताना के किसी प्रान्त का राजा था, कलावती उसकी रानी थी, जिस समय अलाउद्दीन खिलजी जैसलमेर का विनाश कर चित्तौड़ की ओर बार बार युद्ध करनेके लिये आरहा था तो कर्णसिंह के प्रान्त से होकर वह गया था, अलाउद्दीन आप ही प्रचण्डाग्नि स्वरूप था, जिधर मुख करता उसी ओर देश को मानो विध्वंस करता जाता था, जिधर से उस की सेना जाती थी, समस्त ग्राम नगर जलाये जाते थे, खेत उजाड़ दिये जाते थे और सहस्रों जीवों के सिर गाजर मूली की भांति काटते थे दो तीन मुगलिये बादशाहों के सिवाय समस्त मुसलमान बादशाह वह अन्धेर कर गये है जिनको याद करने से रोमटे खड़े हैं।

जाते हैं परन्तु वह जो काम कर गये हैं धर्मकी आड़ में कर गये हैं। अलाउद्दीन को यवन धर्म से इतना प्रेम नहीं था। वह चाहता था कि किसी और धर्म को अपने नाम से प्रचलित करे इसने भा ऐसे उपद्रव किये हैं कि इतिहास पढ़ने वाले सदा इस के नाम को घृणा से याद करते रहेंगे, यह बड़ा घोर बादशाह हुआ है इसने अपनी लूटमार केवल मध्यप्रदेश व राजपूताना ही तक प्रवृत नहीं रखी थी वरन् इसकी सेना चारों ओर युद्ध व खून करती हुई टिड्डी दल की भाँति सेतवन्ध रामेश्वर चली गई थी और वहां भी अन्याय के अस्मरणार्थ सैकड़ों मन्दिर तोड़कर एक मसजिद बनाई थी, जिस समय अलाउद्दीन लूट मार करता हुआ कर्णसिंह के राज्य से निकला तो राजपूत राजा इसके सामने को उचित समझकर सन्मुख हुआ। बड़ी लड़ाई हुई राजा दुर्बल था सेना भी बहुत थोड़ी थी, यद्यपि वीरता घूटी में पड़ी थी परन्तु

राजपूत यदि एकताई के गुणों के अनभिज्ञ हुये चले जाते थे, और इसी लिये इतनी सेना भी इकट्ठी नहीं कर सकते थे, जो समय पर शत्रुओं का साम्हना करती तो भी कर्णसिंह ने अपनी वीरता व धैर्य्य से शत्रु के छक्के छुड़ा दिये।

अलाउद्दीन को थोड़े से राजपूतों से एक चढ़ाई के राह में पराजय होकर बड़ा विस्मय हुआ उसने निशाना ताक कर कर्ण-सिंह को बाण मारा। तीर के लगते ही कर्णसिंह पृथ्वी पर आ गिरा। आज कल की तरह सेना का जय पराजय केवल सर-दार के ऊपर ही निर्भर होता था। कर्ण-सिंह के खाली घोड़े को देख कर कोलाहल मच गया था प्यादे सवार सब निरउत्सा-हित हो गये, बिचारे कर्णसिंह को तो सुध ही नहीं थी। मुसलमान इसी घात में थे, कि किसी तरह जखमी राजा पकड़ा जावे।

जाते हैं परन्तु वह जो काम कर गये हैं धर्मकी आड़ में कर गये हैं । अलाउद्दीन को यवन धर्म से इतना प्रेम नहीं था । वह चाहता था कि किसी और धर्म को अपने नाम से प्रचलित करे इसने भी ऐसे उपद्रव किये हैं कि इतिहास पढ़ने वाले सदा इस के नाम को घृणा से याद करते रहेंगे, यह बड़ा घोर बादशाह हुआ है इसने अपनी लूटमार केवल मध्यप्रदेश व राजपूताना ही तक प्रवृत नहीं रखी थी वरन् इसकी सेना चारों ओर युद्ध व खून करती हुई टिड्डी दल की भाँति सेतबन्ध रामेश्वर चली गई थी और वहां भी अन्याय के अस्मरणार्थ सैकड़ों मन्दिर तोड़कर एक मसजिद बनाई थी, जिस समय अलाउद्दीन लूट मार करता हुआ कर्णसिंह के राज्य से निकला तो राजपूत राजा इसके साम्हने को उचित समझकर सन्मुख हुआ । बड़ी लड़ाई हुई राजा दुर्बल था सेना भी बहुत थोड़ी थी, यद्यपि वीरता चूटी में पड़ी थी परन्तु

राजपूत यदि एकताई के गुणों के अनभिज्ञ हुये चले जाते थे, और इसी लिये इतनी सेना भी इकट्ठी नहीं कर सकते थे, जो समय पर शत्रुओं का सामहना करती तो भी कर्णसिंह ने अपनी वीरता व धैर्य्य से शत्रु के छक्के छुड़ा दिये।

अलाउद्दीन को थोड़े से राजपूतों से एक चढ़ाई के राह में पराजय होकर बड़ा विस्मय हुआ उसने निशाना ताक कर कर्णसिंह को बाण मारा। तीर के लगते ही कर्णसिंह पृथ्वी पर आ गिरा। आज कल की तरह सेना का जय पराजय केवल सरदार के ऊपर ही निर्भर होता था। कर्णसिंह के खाली घोड़े को देख कर कोलाहल मच गया था प्यादे सवार सब निरउत्साहित हो गये, बिचारे कर्णसिंह को तो सुध ही नहीं थी। मुसलमान इसी घात में थे, कि किसी तरह जखमी राजा पकड़ा जावे। इस लिये वह निर्दयता से आगे बढ़े आरहे थे, परन्तु शुभ काम यह था कि उसकी

रानी कलावती साथ रणभूमि में आई हुई थी उसने अपने पति को तो उसी समय डोली में सवार किया। आप उसके स्थान पर आकर सिपाहियों को उत्साहित करने और लड़ने के लिये तैय्यार करने लगी। वह आप शस्त्र धारण किये हुये थी और उसके धनुष से जो बाण निकलते थे, एक दो का काम करके छूटते थे, कौन भीरु पुरुष था, जो ऐसी वीर स्त्री के आधीन रह कर पीठ दिखलाता घोर संग्राम होने लगा। क्षणमात्र में दोनों ओर के सहस्रों वीर पुरुष पृथ्वी पर लेट गये।

कई एक मुसलमान डोली की ओर झुके रानी ने तलवार हाथ में लेकर उन सब को मार गिराया और इसी प्रकार सायंकाल तक बराबर लड़ती रही सन्ध्या समय जब लड़ाई बन्द हो चुकी तो अलाउद्दीन की फौज ने तो ठहरने के बजाये राजपूतों के भय से आगे प्रस्थान किया और वहां के राजपूतों ने अपनी राजधानी में आकर

कर्णसिंह के शरीर से तीर निकाला गया परन्तु वह महाक्लेश में था वैद्यों को उपाय के लिये बुलाया उन सब ने मिल कर कहा कि तीर विष भरा हुआ था, अब कोई उपाय नहीं हो सकता, हां यदि किसी तरह कोई पुरुष राजा के विष को चूसले तो यह बच जावे परन्तु विष चूसने वाला अवश्य ही मर जावेगा, कर्णसिंह को स्वीकार न था कि कोई उसके लिये प्राण दे, न जाने उस समय में विष चूसने का शस्त्र न होता होगा।

थोड़ी रात जाने पर जब राजा सो रहा, कलावती ने उस को दवा सुंघाकर बेसुध कर दिया और आप अपने मुख से उस का विष चूसने लगी।

कर्णसिंह को खबर तक नहीं हुई और उसने थोड़े समय मे उस का सारा विष चूस कर फेंक दिया राजा तो बच गया परन्तु प्रातःकाल को दो तीन घड़ी दिन चढ़ने के पीछे कलावती की दशा बिगड़ने लगी जब

देखा कि समय समीप है कर्णसिंह से कहा राजन् ! मैं आपकी स्त्री और प्रजा हूं मेरे जैसे सहस्रों जीव आप पर न्योछावर हों मुझे स्वीकार न था कि मेरे जीते जी मेरा प्राणपति इस संसार से कूच करे, मैंने आपका विष चूस लिया है, और अब उस के असरे से थोड़ी देर में मेरा इस संसार से कूच होगा, आप अपने चरण मुझे दीजिये, जिससे मैं आप का चरण पकड़े हुये इस शरीर को त्याग सकूं ।

सती पतिव्रता रानी का समय आचुका था, कोई ऐसा उपाय नहीं था जो इस को मृत्यु के हाथ से बचा सके, इस के पतिव्रता भाव को देखकर दुर्बल कर्णसिंह ने चरण आगे बढाया उसने दोनों हाथों से पकड़ कर मस्तक से लगाया, और इसी प्रकार थोड़ी देर में प्राण त्याग दिये कर्णसिंह तो अच्छा हो गया परन्तु अपनी प्यारी रानी के वियोग से सदैव चिन्तातुर रहा कुछ तो विष का असर था और कुछ इस बात

ने उस के मन को अधिक दुःख पहुंचाया जिससे राजा के होठों पर मुसकराहट कभी देखी नही गई उसे कोई सन्तति नहीं थी, परन्तु लोगों के बहुत कहने पर भी इसने विवाह नहीं किया और वृद्धावस्था पाकर संसार से विदा होगया भारत में इस प्रकार की तेजवती देवियां थीं जिनके कारण भारत उन्नत पदवी पर आरूढ़ था।

---

# रूपनगर की राजकुमारी

( १७ )

दिल्ली के बादशाह औरंगजेब ने रूपनगर की जो मेवाड़ की एक (शाखा है) की राजकुमारी को अत्यन्त रूपवती सुन उससे विवाह करने की इच्छा प्रगट की और उसके यहाँ विवाह का संदेशा भेजा। परन्तु हिन्दू जातियों ने म्लेच्छ के घर जाना स्वीकार न किया वरन् उसने अपनी घृणा दिखाई। राजकुल का अभिमान जताया और उसके आये दूत को फटकार कर निकलवा दिया, इससे औरंगजेब ने क्रोधित होकर रूपनगर पर आक्रमण करने को दो हजार घुड़सवार भेजे और सेनापति को आज्ञा दी कि जो वह मुझसे विवाह करने में प्रसन्न न हो तो

आता हुआ सुन राजकुमारी ने राजसिंह से कहला भेजा कि कसाई के हाथ से गाय का छुड़ाना क्षत्रियों का काम है, इस कारण आप सहायता करके मेरी रक्षा करें।

यदि आप प्रयत्न करके इस दुष्ट के पंजे मे से छुड़ावेंगे तो मैं सदैव के निमित्त आप की होकर रहूंगी। आप को अपनी वीरता दिखाने का यथार्थ समय मिला है। इस अवसर को न खोना चाहिये। फिर पत्र के अन्त मे यह भी लिख दिया था जो राजसिंहनी हूं तो कभी बगला को स्त्री न हूंगी। क्या उच्चकुल की राजकुमारी नीच म्लेच्छ की स्त्री हो सकती है साथ ही यह भी धमकी लिखी थी कि जो कदाचित आकर मेरी रक्षा न करेंगे तो मैं इस दुष्ट से बचने के निमित्त आत्महत्या करके प्राणों को छोड़ दूंगी।

इस प्रकारके पत्र को बांचते ही राजसिंह अपने साहसी सवारोंको संगले चुपचाप रात दिन बराबर चलकर अर्वली पहाड़के नीचे २

हो अचानक रूपनगर में आ पहुंचा उसके आने के पश्चात् ही बादशाही लश्कर भी आ पहुंचा वह उसके साथ अत्यन्त ही शूरता से लड़े और पराजित कर पीछे को मार हटाया इस जय के होतेही राजसिंह ने राजकुमारी को अपने साथ ले अपने राज्य में जाय उससे विवाह किया। हिन्दू कुल राज कुल की स्त्रिया कैसी कुलाभिमानी तथा धर्माभिमानी थीं और क्षत्री उनका कितना आदर सत्कार करते थे वह इस वर्णन से भली प्रकार ज्ञात हो जाता है।

---

# गुन्नौर की रानी

( १८ )

एक समय भूपाल के समीपस्थ गुन्नौर नामक स्थान को मुसलमानों ने छल से अपने अधिकार मे कर लिया था, वरन वहां की रानी के धर्म व प्रतिष्ठा को नष्ट करने पर भी वे तत्पर होगये थे। दीनता और नम्रता का अनादर कर महल के नीचे खड़े होकर एक मुसलमान ने वहां की रानी से कहा,-हमारे साथ शादी करना कबूल है या नहीं। समय ऐसा कठिन आगया था अस्वीकार करना कठिन था यह तो प्रकटही था कि जो स्वीकार किया जायगा तो बल पूर्वक पकड़ कर उसे अनेक प्रकार के दुःख देते थे। रानी ने जब आंख फैला कर देखा कि अब किसी प्रकार से छूटने का उपाय नहीं है। तब चित्त मे कोई

दूसरा ही बिचार स्थिर कर खां साहब से कहला भेजा कि आप के साथ विवाह करना स्वीकार है परन्तु दो घटे का अवकाश मिलना चाहिये कि इतनी देर में विवाह सम्बन्धी सब सामग्री प्रस्तुत करलूं।

तदनन्तर तत्काल ही महल का चौक झारा बुहारा गया, वहां पर खांसाहब रानी के वस्त्र भेजे हुये और आभूषणों को धारण कर माला तथा पगड़ी पर बहुमूल्यवान रत्न जटित तुर्रा पहिन नियत समय में वहां आकर बिराजमान हुये। रंग महल से रानी का मुख देखते ही खांसाहब तो मोहित हो गये और मन ही मन कहने लगे कि वाह वाह! जैसा इस रानी के बदन और जवानी की तारीफ सुनी थी उससे भी बढ़कर पाया। या परवरदिगार! आज मेरे ऊपर बड़ी मिहरबानी की है।

रानी ने खांसाहब को सत्कार पूर्वक बिठाया तो खांसाहब मन में इतना अधिक फूल गये कि मानों इस समय उनको

बहिश्त मिल गई। वह बारम्बार दाढ़ी फट-कारने और मूछों पर ताव देने लगे। उन की प्रसन्नता इतनी बढ़गई कि उस समय यह भय था कि कहीं मारे हर्ष के सन्निपात न हो जाय। प्रसन्न होकर बारम्बार मग्न होरहे थे और प्रसन्नता पूर्वक रानी से वार्त्ता-लाप कररहे थे। मिलने में थोड़े समय का विलम्ब देख अत्यन्त व्याकुल हो मन ही मन अपनी बड़ाई मार रहे थे। परन्तु थोड़ी ही देर के उपरान्त रंग में भंग होगया। खांसा-हब का मुख नीला पीला होने लगा, गर्मी से मूर्च्छा आने लगी और प्यास के मारे लगे पानी पानी पुकारने। घबराहट से सारे वस्त्र फाड़कर दूर फेंकने लगे कि तत्काल ही उन पर पंखा झलाजाने और गुलाब जल छिड़का जाने लगा परन्तु इस समय कुछ भी उपाय न हो सका, जो होना था वह तो हो ही गया। जब रानी ने खांसाहब की ऐसी दशा देखी तब अपना घूंघट हटाकर कहने लगी।

अजी खांसाहब अब तो आपका अन्त समय आगया! हमारी तुम्हारी बिवाह

विधि और मृत्यु क्रिया साथ ही होवेगी । जो वस्त्र आप पहिरे हुये हैं, वह विष में रंगे हुये है हमारा धर्म और प्रतिष्ठा नष्ट करने के लिये आप ने कुछ उपाय नहीं छोड़ा इसही कारण आप की दशा यह हुई है । खांसाहब अपने कर्मोंपर पड़े पड़े पछता रहे थे । रानी का इतना कहना था कि सब सुनने वाले भयभीत हो गये । उस समय रानी भी अपने ऊपर आपत्ति का आना विचार कर महल के बुर्ज (गुमटी) से नर्मदा-नदी में कि जो महल के नीचे बहती थी कूदपड़ी और उसी मे डूबकर स्वर्गधाम को गई । उसके स्मरणार्थ एक समाधि भूपाल की सड़क पर बनाई गई है, कि जिस में उस की प्रतिमा स्थापित है । सर्वसाधारण मनुष्य का इस प्रतिमा पर इतना विश्वास है कि उसके दर्शन करते ही तत्काल ज्वर चला जाता है । वर्षाऋतु के उपरान्त इस प्रान्त मे शीतज्वर अधिकता से फैल जाता है परन्तु इस देवी के दर्शन करने वालों को फिर से ज्वर का डर नहीं रहता है और रोगी भला चँगा होजाता है ।

# मीनलदेवी

( १९ )

चन्द्रपुर का राजय कर्नाटक प्रान्त में है वहां के राजा जयकेशी की पुत्री यह मीनलदेवी थी। अठारह वर्ष की अवस्था में उसका बिवाह गुजरात के राजा करण के साथ राजपूतरीति के अनुसार खांडे से हुआ था। इस समय वह एक कुलीन कुल वधू के योग्य ही अनेक उत्तम गुणों से शोभित थी, और देखाव भी साधारण रीति से भला था। जब वह विवाहिता हो पाटन मे आई, तब उस के स्वरूप का वर्णन जैसा भाट के मुह से करण ने सुना था वैसा उस को न समझ कर अत्यन्त शोक हुआ और क्षणभर में ही उस से विमुख रहने लगा। इस कारण रानी मीनलदेवी तथा राज्यमाता उदयमति को भी अति संताप

हुआ और वह कुमारको प्रेम और मर्यादा पूर्वक समझाने लगी, परन्तु करण के मन में उस का कुछ भी प्रभाव न हुआ। उसने न तो दूसरा विवाह ही किया और न किसी दूसरी स्त्री के प्रेम पाश में ही पड़ा। संसार से विरक्त होगया, उस को सैकड़ों मनुष्यों ने विवाह करने को कहा परन्तु उस ने किसी की भी बात न मानी। कुमार की ऐसी दशा से निर्दोष मोनलदेवी को महासंताप होने लगा। वह रात दिन पड़ी हुई बार बार ठंढी श्वास लिया करती और भाग्य पर हाथ रख मनही मन में झुलसा करती। खान पान या वस्त्र अलङ्कार कुछ भी उसे भला न लगता था। राज्य सुख वैभव विष के समान लगते थे और चित्त कहीं भी न लगता था।

किसी प्रकार से भी कुमार करण के विचार में परिवर्त्तन न होता देखकर मोनल-देवी तथा राजमाता उदयमतिने आग में जलकर मरजाने का विचार किया। उन के इस विचार को सुनते ही योग्य प्रधानों ने

समझा बुझाकर निषेध किया और इस घोर कृत्य से रोकलिया और कोई यत्न करके स्त्री पुरुष के बीच में प्रेम करादिया। यद्यपि मोनलदेवी बहुत रूपवान न थी परन्तु शिक्षित विद्वान बुद्धिमान और राजमन्दिर को शोभा बढ़ाने वाली लक्ष्मी देवी के समान थी, इन गुणों का कुमार करण को पूर्ण अनुभव हुआ और दैवयोग से या मोनलदेवी के प्रारब्धबल से स्त्री पुरुषों में ऐसा प्रेम उत्पन्न हुआ कि जैसा अनन्य प्रेम कुछ ही एक भाग्यशाली मनुष्यों को प्राप्त होता है। गुणवती सती मोनलदेवी नित्य मधुर मधुर गान गागाकर नवीन २ आनन्द उत्पन्न कराने लगी और करण के वैरागी चित्त को शुद्ध शृङ्गारी बना डाला। राजनीति और राज काज का मोनलदेवी को अच्छा अनुभव था इस कारण राज्यसम्बन्धी इतिहासों की सुन्दर वार्त्ता से पति को प्रसन्न रखती; इसी प्रकार उसके हृदय में अत्यन्त दया भी थी इस कारण नित्य दान धर्म कामों का

कार्य कर जनहितकारी होने में महारानी मीनलदेवी धर्म पत्नियों तथा राज्यपत्नियों में भी दृष्टान्त रूप हो गई है। सिद्धराज की उदारता और धार्मिक वृत्ति को देख अनुभवी मनुष्य दानेश्वरी राजा करण की उपमा देने लगे और माता मीनलदेवी की स्तुति के गीत गाये जाने लगे।

## भारत का—
# नारी इतिहास
### दूसरा भाग समाप्त।

---

इससे आगे तीसरा भाग मगाकर देखिये छपरहा है शीघ्रही तैय्यार होगा।

मिलने का पता:—

पता:—श्रीमती यशोदादेवी
पोस्ट वक्स नं॰ ४
कर्नलगंज इलाहाबाद